सेवाग्राम

जनता की भाषा में
जनता के भावों का
जनता का अपना काव्य

रचयिता : सोहनलाल द्विवेदी
संरक्षक : घनश्यामदास बिड़ला

प्रकाशक
इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण १५००
२ अक्टूबर १९४६

चित्रकार : श्री शंभुनाथ मिश्र

मुद्रक तथा प्रकाशक
के० मित्रा, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

युगावतार

चल पड़े जिधर दो डग मग में
चल पड़े कोटि पग उसी ओर,

ग्रन्थकार के नाम मालवीयजी का पत्र

प्रिय सोहनलालजी,

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि तुम अपनी राष्ट्रीय कविताओ को 'सेवाग्राम' नाम से एक ग्रंथ में छपवाकर महात्मा गांधी को उनकी ७८ वीं वर्षगांठ पर भेंट कर रहे हो। तुम्हारी कविताओ ने देश मे सम्मान पाया है। मुझे विश्वास है कि इनका और भी अधिक प्रचार होगा। राष्ट्र के उत्थान और अभ्युदय मे ये सहायक हो, ऐसी मेरी कामना है।

मदनमोहन मालवीय

२०।६।४६

ग्रन्थ के संरक्षक का वक्तव्य

सेवाग्राम सोहनलालजी द्विवेदी की राष्ट्रीय कविताओं का संग्रह है। द्विवेदीजी की कविताएँ केवल कलाकारों के ही लिए नहीं हैं। उनमें रस तो होता ही है पर साथ में कुछ जीवन उपयोगी सार भी रहता है। कविता केवल विलास के लिए हो और सार न हो तो फिर वह निर्जीव सी बन जाती है। इस दृष्टि से सेवाग्राम की रचनाएँ अत्यन्त उपयोगी और पठन-पाठन के योग्य है।

घनश्यामदास बिड़ला

प्राक्कथन

डा० अमरनाथ झा, वाइसचांसलर, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी

किं कवे तस्यकाव्येन, किं काण्डेन धनुष्मत ?
परस्य हृदये लग्न न विघूर्णयति यच्छिरः !

सस्कृत साहित्य मे विश्वप्रेम प्रचुर मात्रा में है, परन्तु स्वदेशप्रेम का चिह्न कम है। हमारे पूर्वजो का तो मत था "वसुधैव कुटुम्बकम्"। ससार-मात्र एक है, ईश्वर की समस्त सृष्टि एक है, मानव-जगत् एक है, ऐसी उनकी धारणा थी। परन्तु आधुनिक ऐतिहासिक घटनाओ के कारण सम्पूर्ण जगत् मे राष्ट्रीयता का भाव फैल गया है। पहले अपना देश, फ़िर अन्य देश—यह आज का गान है। इसकी आवश्यकता भी है। पश्चिमीय सभ्यता के बाह्य आडम्बर से हमारे मन मे यह भाव उत्पन्न हो गया है कि जो कुछ आज आविष्कार हो रहा है, जो कुछ हमको अन्य देश मे देख पडता है, जो कुछ हम विदेशीय साहित्य, विदेशीय राजनीति, विदेशीय दर्शन मे पाते है वही अनुकरणीय है, और अपने देश की परम्परागत सभ्यता, अपना दर्शन, अपना साहित्य, अपने आदर्श गर्हणीय है, तिरस्कार-योग्य है। प्राचीनता और नवीनता का समन्वय उचित है। "पुराणमित्येव न साधु सर्वम्", परन्तु नवीन वस्तुओ का ग्रहण करना, केवल इसलिए कि वे नवीन है, उचित नही है। आज की परिस्थिति मे हमे यह सोचना है कि हमारे देश के किन आदर्शों को हम सुरक्षित रक्खे जिनसे हमारा और विश्व का कल्याण हो। हमे यह शिक्षा अपने शास्त्रो से मिलती है कि हमारा प्रधान धर्म्म है कि अपने चित्त को शान्त रखकर आनन्द प्राप्त करे। हमारा प्रयास विश्व मे शान्ति स्थापित करना होना चाहिए। हम सब से सुहृद् भाव रक्खे। हम पृथ्वी के जीवन को अपने आरम्भ और अन्त न समझे। हम आदर्शों और अपने कर्त्तव्य के पालन मे अपने प्राण खोने से न घबराएँ। जिसने माया और ममता को छोडकर राष्ट्रसेवा की है उसकी प्रशसा करे, उसका अनुकरण करे । सेवाग्राम मे इसी आदर्श को सामने रखकर कविताये लिखी गई है।

आज के कवियो मे श्री सोहनलाल जी द्विवेदी की कविताओ की राष्ट्रीयता तथा प्रभावोत्पादकता से साहित्य-मर्मज्ञ बहुत प्रभावित हैं। आपके काव्य बच्चे आनन्द से पढते है, उनका मनोरजन होता है। युवकों को इससे प्रोत्साहन मिलता है, नई चेतना मिलती है। प्रौढ़ पाठको को इसमे विचार की गम्भीरता देख पडती है। सत्काव्य का लक्षण यह है कि वह सद्य हृदयग्राही हो, अत सोहनलाल जी की कविता अवश्य उच्चकोटि की है। इसमे प्रत्येक रुचि को सन्तुष्ट करने की सामग्री है। देश-प्रेम और देश-भक्ति से तो पद-पद अनुप्राणित है। नवीनता के साथ साथ प्राचीनता का सम्मिश्रण है। अहिंसात्मक जन-आन्दोलन की झलक इन कविताओं मे है। और फिर भी कवि का दृष्टिकोण सकुचित नहीं है। राष्ट्र के प्रधान प्रशसनीय विभूतियों का गुणगान तो है, परन्तु ऐसा नही कि किसी समुदाय अथवा समाज-विशेष की इससे कोई क्षति हो अथवा अपमान हो। द्विवेदी जी की कृति शिष्ट है, रसपूर्ण तथा शक्तिपूर्ण है। इससे पहले श्री सोहनलाल जी की कविताओं के कई सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। बालकों के उपयुक्त झरना, शिशु-भारती, बाँसुरी, आदि सग्रह है। इनको बच्चे पढ़कर प्रसन्न हो सकते है और शिक्षा-ग्रहण कर सकते है। वासवदत्ता, हिन्दी-साहित्य मे एक अनूठी रचना है। कुणाल मे बडी कुशलता पूर्ण अतीत भारत की स्मृति के साथ अमर चरित्रो का सुन्दर परिचय मिलता है। भैरवी से स्वदेश-प्रेम जागृत होता है। युगाधार, पूजागीत, तथा प्रभाती राष्ट्रीय चेतना के काव्य-सग्रह हैं। इन कृतियों से कवि को प्रचुर लोकप्रियता तथा सम्मान प्राप्त हुआ है। परन्तु, इसमे सन्देह नहीं कि सेवाग्राम का स्थान इन सब से ऊँचा है।

निवेदन

सेवाग्राम मेरी राष्ट्रीय रचनाओ का सकलन है। ये रचनाएँ भैरवी, युगाधार प्रभाती तथा पूजागीत से सगृहीत की गई हैं। सभी राष्ट्रीय रचनाएँ एक पुस्तक मे पाठको के समक्ष आ सके, इस प्रकाशन का यही उद्देश है।

अपनी रचनाओ के सबध मे मैं क्या कहूँ ? मैं उनके गुण-अवगुण का अच्छा जानकार भी नही हो सकता ! दूसरा कोई कुछ कहे, तो वह सुनने योग्य भी बात हो सकती है और मान्य भी।

जहाँ अन्य कवियो ने स्वर्णकमलो से भारतमाता की पूजा की है, वहाँ ये निर्गन्ध किशुक भी अनादृत न होगे, इतना मुझे विश्वास है।

बिन्दकी, यू० पी०
१ अक्तूबर १९४६

सोहनलाल द्विवेदी

विश्ववंद्य बापू को
७७ वें जन्म-दिवस के
पुण्य पर्व पर
सादर प्रणाम
समर्पित

क्रम

प्रथम पक्ति पृष्ठ

पूजा-गीत

वदना के इन स्वरों में, एक स्वर मेरा मिला लो।

वदिनी माँ को न भूलो,
राग में जब मत्त भूलो;

अर्चना के रत्न-कण में, एक कण मेरा मिला लो।

जब हृदय का तार बोले,
शृङ्खला के बद खोले;

हो जहाँ बलि शीश अगणित, एक शिर मेरा मिला लो।

युगावतार गांधी

चल पडे जिधर दो डग, मग में
चल पडे कोटि पग उसी ओर,
पड गई जिधर भी एक दृष्टि
गड गये कोटि दृग उसी ओर,

जिसके शिर पर निज धरा हाथ
उसके शिर-रक्षक कोटि हाथ,
जिस पर निज मस्तक झुका दिया
झुक गये उसी पर कोटि माथ,

हे कोटिचरण, हे कोटिबाहु!
हे कोटिरूप, हे कोटिनाम!
तुम एकमूर्ति, प्रतिमूर्ति कोटि
हे कोटिमूर्ति, तुमको प्रणाम!

युग बढा तुम्हारी हँसी देख,
युग हटा तुम्हारी भृकुटि देख,
तुम अचल मेखला बन भू की
खींचते काल पर अमिट रेख;

तुम बोल उठे, युग बोल उठा,
तुम मौन बने, युग मौन बना,
कुछ कर्म तुम्हारे सचित कर
युगकर्म जगा, युगधर्म तना;

युग - परिवर्त्तक, युग - सस्थापक,
युग - सचालक, हे युगाधार !
युग - निर्माता, युग- मूर्त्ति ! तुम्हे
युग युग तक युग का नमस्कार !

तुम युग युग की रूढ़ियाँ तोड
रचते रहते नित नई सृष्टि,
उठती नवजीवन की नीवें
ले नवचेतन की दिव्य - दृष्टि,

धर्माडबर के खँडहर पर
कर पद - प्रहार कर धराध्वस्त,
मानवता का पावन मदिर
निर्माण कर रहे सृजन - व्यस्त !

बढते ही जाते दिग्विजयी !
गढते तुम अपना रामराज,
आत्माहुति के मणि-माणिक से
मढते जननी का स्वर्णताज !

तुम कालचक्र के रक्त सने
दशनो को कर से पकड़ सुदृढ,
मानव को दानव के मुँह से
ला रहे खीच बाहर बढ बढ,

पिसती कराहती जगती के
प्राणों में भरते अभय दान,
अधमरे देखते हैं तुमको,
किसने आकर यह किया त्राण ?

दृढ़ चरण, सुदृढ़ करसपुट से
तुम कालचक्र की चाल रोक,
नित महाकाल की छाती पर
लिखते करुणा के पुण्य श्लोक !

कँपता असत्य, कँपती मिथ्या,
बर्बरता कँपती है थरथर !
कँपते सिंहासन, राजमुकुट
कँपते, खिसके आते भू पर,

हैं अस्त्र-शस्त्र कुंठित लुंठित,
सेनायें करतीं गृह-प्रयाण !
रणभेरी बजती है तेरी,
उड़ता है तेरा ध्वज निशान !

हे युग-द्रष्टा, हे युग-स्रष्टा,
पढ़ते कैसा यह मोक्ष-मंत्र ?
इस राजतंत्र के खँडहर में
उगता अभिनव भारत स्वतंत्र !

खादी-गीत

खादी के धागे धागे में
अपनेपन का अभिमान भरा,
माता का इसमें मान भरा
अन्यायी का अपमान भरा,

खादी के रेशे रेशे में
अपने भाई का प्यार भरा,
माँ-बहनो का सत्कार भरा
बच्चो का मधुर दुलार भरा;

खादी की रजत चंद्रिका जब
आकर तन पर मुसकाती है,
तब नवजीवन की नई ज्योति
अन्तस्तल में जग जाती है;

खादी से दीन विपन्नो की
उत्तप्त उसास निकलती है,
जिससे मानव क्या पत्थर की
भी छाती कड़ी पिघलती है,

खादी में कितने ही दलितों के
दग्ध हृदय की दाह छिपी,
कितनों की कसक कराह छिपी
कितनों की आहत आह छिपी !

खादी में कितने ही नंगों
भिखमंगों की है आस छिपी,
कितनों की इसमें भूख छिपी
कितनों की इसमें प्यास छिपी !

खादी तो कोई लड़ने का
है जोशीला रणगान नहीं,
खादी है तीर कमान नहीं,
खादी है खड्ग कृपाण नहीं,

खादी को देख देख तो भी
दुश्मन का दल थहराता है,
खादी का झंडा सत्य शुभ्र
अब सभी ओर फहराता है !

खादी की गंगा जब सिर से
पैरों तक बह लहराती है,
जीवन के कोने कोने की
तब सब कालिख धुल जाती है !

खादी का ताज चाँद-सा जब
मस्तक पर चमक दिखाता है,
कितने ही अत्याचार-ग्रस्त
दीनों के त्रास मिटाता है।

खादी ही भर भर देश-प्रेम
का प्याला मधुर पिलायेगी,
खादी ही दे दे सजीवन
मुर्दों को पुन: जिलायेगी;

खादी ही बढ़, चरणों पर पड
नूपुर-सी लिपट मनायेगी,
खादी ही भारत से रूठी
आजादी को घर लायेगी।

हिन्दुस्तान

जगमग नगरों से दूर दूर
है जहाँ न ऊँचे खड़े महल,
टूटे-फूटे कुछ कच्चे घर
दिखते खेतों में चलते हल,

पुरई पालों, खपरैलों में
रहिमा रमुआ के नावों में
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवों में।

नित फटे चीथड़े पहने जो
हड्डी-पसली के पुतलों में,
असली भारत है बिलखाता
नर-कंकालों की शकलों में,

पैरों की फटी बिवाई में,
अन्तस के गहरे घावों में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवों में।

दिन-रात सदा पिसते रहते
कृषको में औ' मजदूरो में,
जिनको न नसीब नमक-रोटी
जीते रहते उन शूरो में;

भूखे ही जो है सो रहते
विधना के निठुर नियावो में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ?
वह बसा हमारे गाँवो में!

उन रात-रात भर, दिन-दिन भर
खेतो में चलते ढोलो में,
दुपहर की चना-चबेनी में
बिरहा के सूखे बोलो में;

फिर भी, ओठो पर हँसी लिये
मस्ती के मधुर भुलावो में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ?
वह बसा हमारे गाँवो में!

अपनी उन रूप कुमारी में
जिनके नित रूखे रहे केश,
अपने उन राजकुमारो में
जिनके चिथडो से सजे वेश,

अजन को तेल नही घर में
कोरी आँखों के हावों में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ?
वह बसा हमारे गाँवो में!

उस एक कुएँ के पनघट पर
जिसका टूटा है अर्ध भाग,
सब सँभल-सँभल कर जल भरते
गिर जाय न कोई कहीं भाग;

है जहाँ गड़ारी जुड़ न सकी
युग-युग के द्रव्य-अभावों में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवों में !

है जिनके पास एक धोती
है वही दरी, उनकी चादर,
जिससे वह लाज सँभाल सदा
निकला करती घर से बाहर,

पुर-वधुओं का क्या हो शृंगार ?
जो बिका रईसों-रावों में !
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवों में !

सोने-चाँदी का नाम न लो
पीतल-काँसे के कड़े छड़े।
मिल जायँ बहूरानी को तो
समझो उनके सौभाग्य बड़े !

राँगे की काली बिछियों में
पति के सुहाग के भावों में।
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवों में !

ऋण-भार चढ़ा जिनके सिर पर
बढ़ता ही जाता सूद-ब्याज,
घर लाने के पहले कर से
छिन जाता है जिनका अनाज,

उन टूटे दिल की साधो में
उन टूटे हुए हियाओं मे,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

खुरपी ले ले छीलते घास
भरते कोछो की कोरो में,
लकड़ी का बोझ लदा सिर पर
जो कसा मूँज की डोरो में,

उनका अर्जन व्यापार यही
क्या करें ग़रीब उपावो में ?
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

आजीवन श्रम करते रहना,
मुँह से न किंतु कुछ भी कहना,
नित बिपदा पर विपदा सहना,
मन की मन में साधें ढहना,

ये आहे वे, ये आँसू वे
जो लिखे न कही किताबो में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

रामायण के दो-चार ग्रन्थ
जिनके ग्रन्थालय ज्ञान-धाम,
पढ़-सुन लेते जो कभी कभी
हो भक्ति-भाव-वश रामनाम;

जग-गति युग-गति जिनको न ज्ञात
उन अपढ अनारी भावों में
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

चूती जिनकी खपरैल सदा
वर्षा की मूसलधारो मे,
ढह जाती है कच्ची दिवार
पुरवाई की बौछारो म;

उन ठिठुर रहे, उन सिकुड़ रहे
थरथर हाथो में पाँवो में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

जो जनम आसरे औरो के,
युग-युग आश्रित जिनकी पीढ़ी,
जिनकी न कभी अपनी ज़मीन
मर-मिट जाये पीढ़ी-पीढ़ी,

मजबूर सदा दो पैसे के
मालिक के चतुर दुरावो में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो म !

दो कौर न मुँह में अन्न पड़े
तब भूल जावें सारी तानें,
कवि पहचानेंगे रूप-परी
नर-कंकालों को क्या जानें ?

कल्पना सहम जाती उनकी
आते इन ठौर कुठाँवो में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

हड्डी - हड्डी पसली - पसली
निकली है जिनकी एक-एक,
पढ़ लो मानव, किस दानव ने
ये नर-हत्या के लिखे लेख !

पी गया रक्त, खा गया मांस
रे कौन स्वार्थ के दाँवों में !
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

आँखें भीतर जा रही धँसी
किस रौरव का बन रही कूप ?
लग गया पेट जा पीठी से
मानव ? हड्डी का खड़ा स्तूप !

क्यो जला न देते मरघट पर
शव रखा द्वार किन भावो में ?
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

जो एक प्रहर ही खा करके
देते हैं काट दीर्घ जीवन,
जीवन भर फटी लँगोटी ही
जिनका पीताबर दिव्य वसन,

उन विश्व-भरण पोषणकर्त्ता
नर-नारायण के चावो में,
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

सेगाव बनें सब गाव आज
हममे से मोहन बने एक,
उजड़ा वृन्दावन बस जावे
फिर सुख की बसी बजे नेक,

गूँजें स्वतत्रता की ताने
गगा के मधुर बहावो में।
है अपना हिन्दुस्तान कहा ?
वह बसा हमारे गाँवो में !

किसान

ये नभ-चुम्बी प्रासाद-भवन,
जिनमें मडित मोहक कचन,
ये चित्रकला-कौशल-दर्शन,
ये सिह-पौर, तोरन, वन्दन,

गृह—टकराते जिनसे विमान,
गृह—जिनका सब आतक मान,
सिर झुका समझते धन्य प्राण,
ये आन-बान, ये सभी शान,

वह तेरी दौलत पर किसान !
वह तेरी मेहनत पर किसान !
वह तेरी हिम्मत पर किसान !
वह तेरी ताकत पर किसान !

ये रंग-महल, ये मान-भवन,
ये लीलागृह, ये गृह-उपवन,
ये क्रीडागृह, अन्तर प्रांगण,
रनिवास खास, ये राज-सदन,

ये उच्च शिखर पर ध्वज निशान,
डचोढी पर शहनाई सुतान,
पहरेदारो की खर कृपाण,
ये आन-बान, ये सभी शान,

वह तेरी दौलत पर किसान !
वह तेरी मेहनत पर किसान !
वह तेरी हिम्मत पर किसान !
वह तेरी ताकत पर किसान !

ये नूपुर की रुनझुन रुनझुन,
ये पायल की छम छम छम धुन,
ये गमक, मींड, मीठी गुनगुन,
ये जन-समूह की गति सुनमुन,

ये मेहमान, ये मेज़मान,
साकी, सुराही का सामान,
ये जलसा महफिल, समां, तान,
ये करते हैं किस पर गुमान ?

वह तेरी दौलत पर किसान !
वह तेरी मेहनत पर किसान !
वह तेरी रहमत पर किसान !
वह तेरी ताक़त पर किसान !

चलती शोभा का भार लिये,
अंगो का तरुण उभार लिये,
नखशिख सोलह शृङ्गार किये,
रसिको के मन का प्यार लिये,

वह रूप, देख जिसको अजान
जग सुध-बुध खोता हृदय-प्राण,
विधि की सुन्दरता का बखान,
प्राणों का अर्पण, प्रणय-गान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी हिकमत पर किसान!
वह तेरी क़िस्मत पर किसान!

सभ्यता तीन बल खाती है,
इठलाती है, इतराती है,
शिष्टता लक लचकाती है,
झुक झूम भूमि-रज लाती है,

नम्रता, विनय, अनुनय महान,
सज्जनता, मधुर स्वभाव बान;
आगत-स्वागत, सम्मान-मान,
सरलता, शील के विशद गान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी रहमत पर किसान!
वह तेरी कूवत पर किसान!

शूरों-वीरों के बाहुदंड,
जिनमें अक्षय बल हैं प्रचण्ड,
ये प्रणवीरो के प्रण अखंड,
जो करते भूतल खंड-खंड,

ये योधाओ के धनुष-बाण,
ये वीरो के चमचम कृपाण,
ये शूरो के विक्रम महान,
ये रणवीरो की विजय-तान,

वह तेरी दौलत पर किसान !
वह तेरी मेहनत पर किसान !
वह तेरी रहमत पर किसान !
वह तेरी ताकत पर किसान !

ये बडे बडे प्राचीन क़िले
जो महाकाल से नही हिले,
ये यश स्तम्भ जो लौह ढले
जिनमें वीरो के नाम लिखे,

ये आर्यों के आदर्श गान,
ये गुप्त-वंश की विजय तान,
ये रजपूती जौहर गुमान,
ये मुग़ल-मराठों के बखान,

वह तेरी दौलत पर किसान !
वह तेरी मेहनत पर किसान !
वह तेरी हिम्मत पर किसान !
वह तेरी जुर्रत पर किसान !

ये इन्द्रप्रस्थ के राज्य-सदन,
पाटलीपुत्र के भव्य भवन,
ये मगध, अयोध्या, ऋषिपत्तन,
उज्जैन अवन्ती के प्रांगण,

वैशाली का वैभव महान,
काशी-प्रयाग के कीर्ति-गान,
लखनवी नवाबों के विलास,
मथुरा की सुख-सम्पत्ति महान,

वह तेरी दौलत पर किसान !
वह तेरी मेहनत पर किसान !
वह तेरी हिम्मत पर किसान !
वह तेरी ताकत पर किसान !

इस भारत का सुखमय अतीत,
जिसकी सुधि अब भी है पुनीत,
इस वर्तमान के विभव गीत,
जिनमें मन का मधु सगृहीत,

आशाओं का सुख मूर्त्तिमान,
अरमानों का स्वर्णिम विहान,
प्रतिदिन, प्रतिपल की क्रिया, ध्यान,
उज्ज्वल भविष्य के तान तान,

वह तेरी दौलत पर किसान !
वह तेरी मेहनत पर किसान !
वह तेरी हिम्मत पर किसान !
वह तेरी ताक़त पर किसान !

कल्पना पङ्ख फैलाती है,
छू छोर क्षितिज के आती है,
भावना डुबकियाँ खाती है,
सागर मथ अमृत लाती है,

ये शब्द विहग से गीतमान,
ये छन्द मलय से धावमान,
प्रतिभा की डाली पुष्पमान,
तनता है कविता का वितान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी हिम्मत पर किसान!
वह तेरी ताकत पर किसान!

निर्णय देते हैं न्यायालय,
स्नातक बिखेरते विद्यालय।
कौशल दिखलाते यन्त्रालय,
श्रद्धा समेटते देवालय,

ग्रन्थालय के ये गहन ज्ञान,
संगीतालय के तान-गान,
शस्त्रालय के खनखन कृपाण,
शास्त्रालय के गौरव महान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी हिम्मत पर किसान!
वह तेरी कूवत पर किसान!

ये साधु, सती, ये यती, सन्त,
ये तपसी-योगी, ये महन्त,
ये धनी-गुनी, पण्डित अनन्त,
ये नेता, वक्ता, कलावन्त,

ज्ञानी-ध्यानी का ज्ञान-ध्यान,
दानी-मानी का दान-मान,
साधना, तपस्या के विधान,
ये मानव के बलिदान-गान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी हिम्मत पर किसान!
वह तेरी ताकत पर किसान!

ये घनन-घनन घन घटा-रव,
ये झाँझ-मृदग-नाद भैरव,
ये स्वर्ण-थाल आरती विभव,
ये शङ्ख-ध्वनि, पूजन कलरव,

ये जन-समूह सागर समान,
जो उमड रहा तज धैर्य्य-ध्यान,
केसर, कस्तूरी, धूप-दान
ये भक्ति-भाव के मत्त गान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी गफ़लत पर किसान!
वह तेरी हिम्मत पर किसान!

ये मन्दिर, मस्जिद, गिरजा
पादरी, मोलवी, पण्डि
ये मठ, विहार, गद्दी गु
भिक्षुक, सन्यासी, यती

जप-तप, व्रत-पूजा, ज्ञान-
रोजा-नमाज, वहदत, अ
ये धर्म-कर्म, दीनो-इ
पोथी पुराण, कलमा-क़

वह तेरी दौलत पर किस
वह तेरी मेहनत पर किस
वह तेरी न्यामत पर किस
वह तेरी बरकत पर किस

ये बड़े-बड़े साम्राज्य -
युग-युग से आते चले
ये सिंहासन, ये तख्त-
ये किले दुर्ग, गढ़ शस्त्र-

इन राज्यो की ईंटें म
इन राज्यो की नींवें म
इनकी दीवारो की उ
इनकी प्राचीरों के उ

वह तेरी हड्डी पर किस
वह तेरी पसली पर किस
वह तेरी आँतों पर किस
नस की तांतो पर रे किस

चित्र श्री सुधीर खास्तगीर के सौजन्य से

यदि उठ उठ तू ओ शेषनाग !
हो ध्वस्त पलक में राज्य भाग,
सम्राट् निहारें नींद त्याग,
है कहीं मुकुट तो कहीं पाग,

सामन्त भग रहे बचा प्राण,
सन्तरी भयाकुल लुप्त ज्ञान
सेनायें हैं ढूँढ़ती त्राण,
उड़ गये हवा में ध्वज निशान !

साम्राज्यवाद का यह विधान
शासन सत्ता का यह गुमान
वह तेरी रहमत पर किसान,
यह तेरी गफलत पर किसान !

पृष्ठ २३

यदि हिल उठ तू ओ शेषनाग !
हो ध्वस्त पलक में राज्य-भाग,
सम्राट् निहारे, नींद त्याग,
है कहीं मुकुट, तो कहीं पाग !

सामन्त भग रहे बचा जान,
सन्तरी भयाकुल, लुप्त ज्ञान,
सेनायें हैं ढूँढ़ती त्राण;
उड़ गये हवा में ध्वज-निशान !

साम्राज्यवाद का यह विधान,
शासन-सत्ता का यह गुमान,
वह तेरी रहमत पर किसान !
वह तेरी गफलत पर किसान !

मा ने तुझ पर आशा बाँधी,
तू दे अपने बल की काँधी,
ओ मलय पवन बन जा आँधी,
तुझसे ही गाँधी है गाँधी,

तुझसे सुभाष है भासमान,
तुझसे मोती का बढ़ा मान;
तू ज्योति जवाहर की महान,
उड़ना नभ पर अपना निशान,

वह तेरी ताक़त पर किसान !
वह तेरी क़ूवत पर किसान !
वह तेरी जुरअत पर किसान !
वह तेरी हिम्मत पर किसान !

तू मदवालों से भाग-भाग,
सोये किसान, उठ! जाग-जाग!
निष्ठुर शासन में लगा आग,
गा महाक्रान्ति का अभय-राग!

लख जननी का मुख आज म्लान,
वह तेरा ही धर रही ध्यान,
तेरा लोहा जो सके मान,
किसमें इतना बल है महान?

रे मर मिटने की ठान-ठान,
हो स्वतन्त्रता का शुभ विहान।
गूँजे दिशि दिशि में एक तान—
जय जन्मभूमि! जय-जय किसान!

कणिका

उदय हुआ जीवन में ऐसे
परवशता का प्रात।
आज न ये दिन ही अपने हैं
आज न अपनी रात!

पतन, पतन की सीमा का भी
होता है कुछ अन्त!
उठने के प्रयत्न में
लगते हैं अपराध अनन्त!

यहीं छिपे हैं धन्वा मेरे
यहीं छिपे हैं तीर,
मेरे आँगन के कण-कण में
सोये अगणित वीर!

हल्दीघाटी

वैरागन-सी बीहड़ वन में
कहाँ छिपी बैठी एकान्त?
मात! आज तुम्हारे दर्शन को
मैं हूँ व्याकुल उद्भ्रान्त!

तपस्विनी, नीरव निर्जन में
कौन साधना में तल्लीन?
बीते युग की मधुर स्मृति में
क्या तुम रहती हो लवलीन?

जगतीतल की समर-भूमि में
तुम पावन हो लाखों में,
दर्शन दो, तव चरणधूलि
ले लूँ मस्तक में, आँखों में।

तुममें ही हो गये वतन के
लिए अनेको वीर शहीद,
तुम-सा तीर्थ-स्थान कौन
हम मतवालो के लिए पुनीत ?

आजादी के दीवानो को
क्या जग के उपकरणो में ?
मन्दिर मसजिद गिरजा, सब तो
बसे तुम्हारे चरणों में !

कहाँ तुम्हारे आँगन में
खेला था वह माई का लाल,
वह माई का लाल, जिसे
पा करके तुम हो गईं निहाल।

वह माई का लाल, जिसे
दुनिया कहती है वीर प्रताप,
कहाँ तुम्हारे आँगन में
उसके पवित्र चरणों की छाप ?

उसके पद-रज की कीमत क्या
हो सकता है यह जीवन ?
स्वीकृत हो, वरदान मिले,
लो चढ़ा रहा अपना कण-कण !

तुमने स्वतन्त्रता के स्वर में
गाया प्रथम प्रथम रणगान,
दौड पडे रजपूत बाँकुरे
सुन-सुनकर आतुर आह्वान !

हल्दीघाटी, मचा तुम्हारे
आँगन में भीषण संग्राम,
रज में लीन हो गये पल में
अगणित राजमुकुट-अभिराम !

युग-युग बीत गये, तब तुमने
खेला था अद्भुत रण-रग,
एकबार फिर, भरो हमारे
हृदयो में मा वही उमग।

गाओ, मा, फिर एकबार तुम
वे मरन के मीठे गान,
हम मतवाले हो स्वदेश के
चरणों में हँस हँस बलिदान !

राणा प्रताप के प्रति

कल हुआ तुम्हारा राजतिलक
बन गये आज ही वैरागी ?
उत्फुल्ल मधु-मदिर सरसिज में
यह कैसी तरुण अरुण आगी ?

क्या कहा, कि—,
'तब तक तुम न कभी,
वैभव-सिंचित शृङ्गार करो'
क्या कहा, कि—,
'जब तक तुम न विगत—
गौरव स्वदेश उद्धार करो !'

माणिक-मणिमय सिंहासन को
कंकड़ पत्थर के कोनों पर,
सोने-चाँदी के पात्रों को
पत्तों के पीले दोनो पर,

वैभव से विह्वल महलो को
काँटो की कटु झोपडियो पर,
मधु से मतवाली बेलायें
भूखी बिलखाती घडियो पर,

रानी कुमार-सी निधियो को
मा की आँसू की लडियो पर,
तुमने अपने को लुटा दिया
आजादी की फुलझडियो पर!

निर्वासन के निष्ठुर प्रण मे
धुधुवाती रक्त-चिता रण में,
बाणो के भीषण वर्षण मे
फोहारे-से बहते व्रण में,

बेटा की भूखी आहो मे
बेटी की प्यासी बाहों में,
तुमने आजादी को देखा
मरने की मीठी चाहो में!

किस अमर शक्ति आराधन म
किस मुक्ति-युक्ति के साधन में,
मेरे बैरागी वीर! व्यग्र
किस तपबल के उत्पादन में?

हम कसे कवच, सज अस्त्र-शस्त्र
व्याकुल हैं रण में जाने को,
मेरे सेनापति ! कहाँ छिपे ?
तुम आओ शख बजाने को;

जागो ! प्रताप, मेवाड देश के
लक्ष्यभेद हैं जगा रहे,
जागो ! प्रताप, मा-बहनो के
अपमान-छेद हैं जगा रहे;

जागो प्रताप, मदवालो के
मतवाले सेना सजा रहे,
जागो प्रताप, हल्दीघाटी में
वैरी भेरी बजा रहे !

मेरे प्रताप, तुम फूट पडो
मेरे आँसू की धारो से,
मेरे प्रताप, तुम गूँज उठो
मेरी सतप्त पुकारो से,

मेरे प्रताप, तुम बिखर पडो
मेरे उत्पीडन-भारो से,
मेरे प्रताप, तुम निखर पडो
मेरे बलि के उपहारो से।

बुद्धदेव के प्रति

आओ फिर से करुणावतार!

वट-तट पर हृदय अधीर लिये,
है खड़ी सुजाता खीर लिये;
खोले कुटिया के बन्द द्वार।
आओ फिर से करुणावतार!

फिर बैठे हैं चिंतित अशोक,
शिर छत्र, किंतु है हृदय-शोक!
रण की जयश्री बन रही हार!
आओ फिर से करुणावतार!

मानव ने दानव धरा रूप,
भर रहे रक्त से समर-कूप,
डूबती धरा को लो उबार!
आओ फिर से करुणावतार!

महर्षि मालवीय

तुम्हे स्नेह की मूर्त्ति कहूँ
या नवजीवन की स्फूर्ति कहूँ,
या अपने निर्धन भारत की
निधि की अनुपम मूर्त्ति कहूँ ?

तुम्हे दया-अवतार कहूँ
या दुखियों की पतवार कहूँ,
नई सृष्टि रचनेवाले
या तुम्हे नया करतार कहूँ ?

तुम्हे कहूँ सच्चा अनुरागी
या कि कहूँ सच्चा त्यागी ?
सर्व - विभव - सपन्न कहूँ
या कहूँ तप-निरत बैरागी ?

तुम्हें कहूँ मैं वयोवृद्ध,
या बाँका तरुण जवान कहूँ ?
तुम इतने महान, जी होता
मैं तुमको अनजान कहूँ !

कह सकता हूँ तो कहने दो
मैं तुमको श्रद्धेय कहूँ।
निर्बल का बल कहूँ,
अनाथों का तुमको आश्रय कहूँ।

श्रेय कहूँ, या प्रेय कहूँ
या मैं तुमको ध्रुव-ध्येय कहूँ?
तुम इतने महान, जी होता
मैं तुमको अज्ञेय कहूँ!

वीरो का अभिमान कहूँ,
या शूरो का सम्मान कहूँ?
मृदु मुरली की तान कहूँ,
या रणभेरी का गान कहूँ?

शरणागत का त्राण कहूँ
मानव-जीवन-कल्याण कहूँ?
जी होता, सब कुछ कह तुमको
भक्तो का भगवान कहूँ!

जी होता है मातृ-भूमि का
तुम्हे अचल अनुराग कहूँ,
जी होता है, परम तपस्वी
का मैं तुमको त्याग कहूँ;

जी होता है प्राण फूँकने-
वाली तुमको आग कहूँ,
इस अभागिनी भारत-
जननी का तुमको सौभाग्य कहूँ!

विमल विश्वविद्यालय विस्तृत
क्या गाऊँ मैं गौरव-गान ?
ईंट-ईंट के उर से पूछो
किसका है कितना बलिदान।

हैं कालेज अनेकों निर्मित
फिर भी नित नूतन निर्माण।
कौन गिन सकेगा, कितने हैं
मन में छिपे हुए अरमान ?

तुम्हे आजकल नहीं और धुन
केवल आजादी की चाह।
रह-रह कसक कसक उद्‌ठा
करती है उर में आह् कराह !

गला दिया तुमने तन को
रो-रो आँसू के पानी में,
मातृभूमि की व्यथा हाय
सहते हम भरी जवानी में !

मिले तुम्हारी भक्ति देश को
हम जननी-जय-गान करें,
मिले तुम्हारी शक्ति देश को
हम नित नव उत्थान करें,

मिले तुम्हारी आग देश को
आजादी आह्वान करें,
मिले तुम्हारा त्याग देश को
तन-मन-धन बलिदान करें।

जियो, देश के दलित अभागों के
ही नाते तुम सौ वर्ष !
जियो, वृद्ध माता के उर में
धैर्य बँधाते तुम सौ वर्ष !

जियो, पिता, पुत्रो को अपना
प्यार लुटाते तुम सौ वर्ष !
जियो, राष्ट्र की स्वतन्त्रता
के आते-आते तुम सौ वर्ष !

तरुण तपस्वी

शुद्धोदन के सिंहासन के
सुख की ममता त्याग,
किस गौतम के यौवन में
जागा यह परम विराग ?

बोधिवृक्ष है नहीं,
हिमाचल की छाया के नीचे,
कौन तपस्वी तप करता है
करुणा-लोचन मीचे ?

बोल उठीं गंगा की लहरें—
यह है वह नरनाहर,
जिसकी जग में विमल ज्योति
जननी का लाल जवाहर !

ग्राम-ग्राम में नगर-नगर में
गृह-गृह में जा-जाकर,
आजादी की अलख जगाता
तन में भस्म रमाकर !

यह नेता है कोटि-कोटि
तरुणों के उर का स्वामी,
सारा भारतवर्ष आज है
इसका ही अनुगामी।

ओ भारत के तरुण तपस्वी!
तुम प्रतिपल जन-जन में,
स्वतन्त्रता की ज्वाला बनकर
धधक उठो मन-मन में।

सेगाँव का सन्त

विभु का पावन आदेश लिये
देवों का अनुपम वेश लिये,
यह कौन चला जाता पथ पर
नवयुग का नव सदेश लिये ?

युग-युग का घन तम है भगता,
प्राची में नव प्रकाश जगता,

एशिया खड की दिव्य भूमि
शोभित है दिव्य प्रवेश लिये,
यह कौन चला जाता पथ पर
नवयुग का नव सदेश लिये ?

पग-पग में जगमग उजियाली
वन-वन लहराती हरियाली,

करुणावतार फिर क्या आया
करुणा का दान अशेष लिये ?
यह कौन चला जाता पथ पर
नव युग का नव सदेश लिये ?

तुलसीदास

जब मुग़ल महीपों के बादल
छाये जीवन-नभ में अपार
दासता, पराजय, गृह-विग्रह
से गहराया तम का प्रसार,

तब रामनाम का अमृत ले
आये गौरव गाते अमन्द्र,
मृत हत जनता को मिले प्राण
चमके तुम बन सौभाग्य-चन्द्र!

हिन्दूकुल का जब महापोत
था इस जग-जलनिधि में अधीर,
तुम बने अचल आकाशदीप
दिखलाया प्रतिपल सुगम तीर,

अंधड़ वैभव के बहे घोर
लहरें विलास की उठीं रोर,
तुम सुदृढ़ पाल बन लोकपाल
तब ले आये निज धर्म ओर।

गाते यदुपति के रूपगीत
आये थे प्रेमी सूरदास,
जर्जरित धमनियों में हमने
पाया नवयौवन का विलास;

पर, वह पौरुष, वह बलविक्रम,
जिससे जय मिलती अनायास,
दी शक्ति तुम्हीं ने शक्तिमूर्ति,
तब उठे पुन: हम गिरे दास;

पा रामनाम का विजयमंत्र
हम भूल गये निज देशकाल,
उत्साह जगा, साहस फूटा,
फिर से नत, उन्नत हुए भाल,

हम अड़े अचल हो निज पथ पर
हम खड़े हुए निज पग सँभाल,
हम गड़े धर्म-हित पर अपने
हम लड़े कर्म-हित ठोक ताल।

उपनिषद्, वेद, दर्शन, पुराण,
शत सद्ग्रंथों का खींच सार,
प्रतिपल जप के संपुट दे दे
सुलगा तप की ज्वाला अपार,

फिर निज मन के मुक्ताकण दे,
औ' लोकवेद की धातु ढार,
यह राम-रसायन रचा विमल
नश्वर तन को अमृतोऽपहार!

हे वाल्मीकि के पुनर्जन्म,
क्या नगर-नगर, क्या ग्राम-ग्राम,
बज रही भक्ति की मधुर बीन
क्या भवन-भवन, क्या धाम-धाम,

आबाल वृद्ध, नारी नर में
क्या प्रात-प्रात, क्या शाम-शाम,
तुलसी तुम गूँज रहे रह-रह
गृह-गृह में बनकर रामनाम!

क्या राजभवन, क्या रकद्वार,
सब ओर समादृत तुम समान,
क्या ज्ञानीगृह, विज्ञानीगृह,
युगवाणी के तुम बने गान;

क्या यती, व्रती, क्या गृही, रती,
करते सबको गतिमति प्रदान,
नदित स्वदेश, वदित विदेश,
हे तुलसी तुम युग-युग महान!

कामी, प्रताडना थी कैसी?
बन गये एक क्षण में अकाम,
निष्काम रहे आजीवन ही
फिर जगा न मन में कभी काम,

फिर, कब तुम राजापुर लौटे
जब चले छोड़कर धराधाम,
सब भूमि बन गई जन्मभूमि
जब रसना में रम गया राम!

वह कौन निशा थी, कौन प्रहर,
जब एकाकीपन बना भार,
तुम डगमग हुए, अडिग न रहे,
चल पड़े अचानक दुर्निवार!

इस पार, तुम्हारा धुर गृह था,
उस पार, प्रिया का रत्न-धाम,
थी बीच बढ़ी गङ्गा अथाह,
श्रावण घन से प्लावित प्रकाम।

तरणी न कहीं था कर्णधार,
तुम कूद पड़े जल में अपार,
उस पार गये पल में कैसे,
ले गया कौन तुमको उतार?

कितनी उत्सुकता, उत्कंठा
से तुम पहुँचे पद तल अधीर
मुखचन्द्र-कान्ति से करने को
शीतल अपना आकुल शरीर;

जिन आँखों में स्वागत-वदन
का खींचा तुमने मधुर चित्र,
जिस मुखमंडल में निमिष प्रहर
देखा तुमने निज सुख पवित्र,

जिन अधरों के अधरामृत से
चाहा था तुमने अमृतपान,
उनमें ही कैसा परिवर्तन!
कैसे निकले विष-बुझे बाण!—

'क्यों हुई न तुमको ग्लानि नाथ ?
क्यों आई तुम्हें न लाज नाथ ?
इतने कामाकुल बन अधीर,
आये अंधे बन आज नाथ !

'इस हाड़-मास के पुतले पर
तुमको है जितनी परम प्रीति,
इतनी होती यदि रामचरण,
तो होती तुमको फिर न भीति ?'

इस जग जीवन का सार मान,
जिस पर अर्पित नित किये प्राण !
तज लोक-लाज, तज लोक-भीति
आये जिसके गृह शरण मान,

उसने ही तन मन प्राणों पर,
जब किया कठिन निर्मम प्रहार,
अनुभूति विभूति मिली उस दिन,
तुम हुए उसी दिन निर्विकार !

उठती होगी तब तो न देह
चेतन भी होगा जड़ीभूत,
जब लगे लौटने होगे तुम
यों निपट निराशा से प्रभूत,

दृग-तल होगा, घन अंधकार,
पद तल पथ, जिसका हो न छोर,
जड़ वाणी, जड़ मन नयन प्राण,
उठते न चरण होंगे कठोर !

हे तुलसी, दृग में लिये अश्रु
लेकर उर में व्रण दीर्घ घाव,
तुम चले प्रताड़ित किधर कहाँ
कैसे कब मन में जगे भाव?

निन्दित तुलसी, क्रन्दित तुलसी,
तुम चले किधर मेरे निराश,
कर में ले दीपक बुझा हुआ,
विक्षिप्त बने, मुखश्री उदास!

जर्जरित हृदय, जर्जरित देह
जर्जरित लिये ये क्षुब्ध प्राण,
कितने दुख से तुमने प्रेमी,
तब कहीं किया होगा प्रयाण?

किसके पुर में, किसके उर में,
कब कहाँ कहाँ पर ढूँढ़ त्राण?
घूमें होगे पागल तुलसी,
अन्तस में दाबे विषम बाण!

प्रेमी के उर की प्रेम प्यास की
लगा सका है कौन थाह?
प्रणयी के मन की साधो की
पा सका कौन है तट अथाह?

प्रेमी की गहन निराशा का
पा सका अभी तक छोर कौन!
इन प्रश्नो का उत्तर प्रतिध्वनि,
इनका उत्तर है अमर मौन!

सद्भक्ति जगी उर में प्रपूर्ण
अनुकरण किया नित आर्य-पंथ,
तब रामनाम के अक्षर से
लिखने बैठे निज आयुग्रंथ।

जीवन के निशिदिन-पृष्ठों पर,
जिनमें अंकित था 'काम' काम,
क्या परिवर्तन, क्या आवर्तन?
वे गूँज उठे बन 'राम राम'!

नित सतशरण, नित सतचरण,
सद्ग्रथ पठन, सद्ग्रथ मनन,
स्वाध्याय बना जीवन का क्रम,
नित कामदमन, नित रामरमण।

तुम चले विचरते तीर्थ-तीर्थ
करने मन का मल पाप-हरण,
काशी, प्रयाग, वृन्दावन में,
हैं बने तुम्हारे अमिट चरण!

ये युग-युग के थे पूर्ण पुण्य
ये युग-युग के थे संस्कार,
ये युग-युग के थे जप औ' तप
ये युग-युग के थे व्रत अपार;

सोये से जाग उठे पल में
सोये फिर कभी न पलक मार,
श्री रामनाम का राग उठा
गमके प्राणों के तार तार!

हे भक्तमाल के कौस्तुभ मणि,
सन्तों की वाणी के विलास,
अधिकृत की कौन न कृति तुमने,
दर्शन पुराण के दृढ़ प्रयास !

है शब्द-शब्द में भरा भाव,
है छंद-छंद में भरा ज्ञान,
है वाक्य-वाक्य में अमर वचन,
वाणी में वीणा का विधान !

काशी का वह आवास कौन
जो बना तुम्हारा सिद्धि-पीठ?
सकेत बता सकते तो फिर,
कितने न लगाते वहाँ दीठ।

साधक, वह कौन सिद्धि-आसन,
जिससे तुम द्रुत पा गये सिद्धि,
सब सिद्धि समृद्धि झुकी पद-तल,
हे सिद्ध, तुम्हारी लख प्रसिद्धि !

गुरु बोल उठे श्री रामनाम
तुम बोल उठे श्री रामनाम,
गंगा की लय में लहरो में
हिल्लोल उठे श्री रामनाम !

जन-जन में मन-मन में क्षण-क्षण,
कल्लोल उठे श्री रामनाम।
जब उठी तुम्हारी अन्तर्ध्वनि
तब डोल उठे वे स्वय राम !

कितनी अनन्य थी परम भक्ति,
जब देखा वंशी सजी हाथ,
बोले, लो, धनुषबाण कर में,
तब तुलसी-मस्तक झुके नाथ!

रीझे होगे, खीझे होगे
इस शिशुहठ पर वे प्रणतपाल!
घनश्याम मुग्ध हो बने राम
तब झुका तुम्हारा भक्त-भाल!

मीरा, वह गिरिधर की दासी,
जब पा भव का रौरव अशात,
श्रीचरण शरण को वरण किया,
आई करुणा से स्वराक्रात,

सङ्कटमोचन, दृढ़व्रती, तुम्ही ने
दे तब दृढ रति का विधान,
दे अभय दान आकुल उर को
जीवन में जीवन दिया दान!

पी गई तुम्हारा बल पाकर
वह कालकूट को अमृत मान,
वंशीधर पदतल-प्रीति लगी,
तब जन्म-मरण दोनो समान!

वैभव विलास के भवन त्याग,
एकाकी, निर्जन अर्धरात,
यमुनातट पर वंशी-ध्वनि सुन,
चल पडी बावली पुलकगात;

मीरा, वह भक्तिमूर्त्ति मीरा,
चल पडी जिधर वह तीर्थ बना,
मरुथल मे यमुना उमड चली
तरुतल तमाल का कुंज घना,

करतालो की करतल-ध्वनि में
जब बोल उठी वह कृष्ण कृष्ण,
भूमंडल झूम उठा रस में
जल थल, तरु तृण, जागे सतृष्ण !

'धनधाम, धरा परिवार तजो,
जिससे न रामपद लगे प्रीति',
गूँजते तुम्हारे अमर वाक्य,
प्रतिपल प्राणो में बन प्रतीति,

जब प्रीति जगी सच्ची मन में
तब लोकलाज, क्या लोकभीति ?
प्रिय रति अनन्य, गतिमति अनन्य,
नित धन्य तुम्हारी प्रेम-नीति !

तुलसी, यदि तुम आते न यहाँ
हम ढोया करते धरा धाम,
वैभव-विलास में मर मिटते
सूझता हमें कब सत्य काम ?

निर्गुण निरीह के घन तम में,
भटका करते हम बार-बार,
यदि सगुण रूप की दिव्य ज्योति,
देते न मधुरतम तुम प्रसार !

विस्मरण हमें है वाल्मीकि
भूले गीता, भूले पुराण,
दुर्गम दुर्बोध वेद हमको,
वैदिक वाणी से हम अजान।

अपनी गतिमति, अपनी संस्कृति,
अपनी गति-विधि, होता न ज्ञान,
यदि तुम न क्रान्तदर्शी! भरते
हिन्दी में हिन्दू-धर्म प्राण,

वैष्णव-शैवों में छिड़ा द्वंद्व,
तुम सद्वैष्णव आये उदार!
बिछुड़े हृदयों को मिला दिया।
हो गये एक बिखरे अपार,

मिट गई कलह, छा गई शान्ति,
तुमने दी वह ममता प्रसार,
हिन्दूकुल की बिखरी लड़ियाँ
हो गई एक पा स्नेह-तार!

संस्कृत का सिंहासन जिसमें
कवि कालिदास औ' व्यास भास,
आश्रय पाकर के हुए विश्रुत
वीणा वाणी के बन विलास।

पर, तुम भव का गौरव बिसार,
हिन्दी जननी के बढ़े द्वार
सम्राज्ञी बना दिया उसको
जो थी भिखारिणी कल अपार;

रच रामचरित का विशद ग्रंथ
तुम बनकर ज्योतित कोटि दीप,
युग देशकाल पर भुज प्रसार
मिलते आ प्राणो के समीप;

मेरी जननी के जन-जन में
तुम बसे बने मन के महीप,
तुम-सा जीवन मुक्ता पाने
बन जाते कितने देश सीप।

युग-चक्र प्रवर्त्तन किया अचल,
सगठित किया बिखरा समाज,
श्री रामनाम का शख फूँक,
जागरण प्रतिष्ठित किया आज।

मदिर के घटो से जागी
फिर आर्यों की आत्मा महान,
अभ्युदय हुआ निज गौरव का
विस्मृत संस्कृति में पड़े प्राण।

तुम आर्यों के जन गण नायक,
करके प्रबुद्ध जनमत अबोध,
ले चले क्रान्तिपथ पर हमको
नित मुक्ति युक्ति की किया शोध।

जीवन भर ही मन प्राणो से
नित किया अनार्यों से विरोध,
कर. गये अधिष्ठित आर्यधर्म
भर गये राम से आत्मबोध।

जनगण के दुख से हो विगलित
उद्धारहेतु, कर्त्तव्यमूढ़
तुम चले ढूँढ़ने संजीवन
जो युग-युग तक दे शक्ति गूढ़,

भैरवी रामगुण की गाई
जागे जिससे बुध और मूढ़;
तुम जातिरथी, तुम राष्ट्ररथी,
तव प्रगति देख, गतिमति विमूढ !

गूँजो फिर बनकर रामनाम !
जनगण की वाणी में प्रकाम।
गूँजो फिर बनकर रामनाम !
बंदी के प्राणों में ललाम !

गूँजो फिर बनकर रामनाम,
रणवीरों के मन में अकाम !
नवराष्ट्र-जागरण के युग में
गूँजो तुलसी तुम धाम-धाम !

गूँजो बापू के दृढ़ स्वर में
गूँजो गांधी की दृढ़ गति में,
गूँजो स्वदेश मतवालों की
वीणा वाणी में दृढ़ मति में।

गूँजो नंगो भिखमंगों की
विप्लव तानों में धृति रति में,
नव राष्ट्र-संगठन के युग में
गूँजो तुम कोटि चरण गति में !

दो हमको भूली कर्म-शक्ति
दो हमको फिर से आत्मबोध,
दो हमें राम के मानस का
वह क्षत्रिय का अपमान-क्रोध,

दो लक्ष्मण का वह भ्रातृभाव,
हम बढ़ें, सुदृढ हो जातिबोध,
ले चलो हमें जययात्रा में
कवि, बनो राष्ट्रकवि, राष्ट्रबोध !

दो नवचेतन, दो नवजीवन,
दो सजीवन, दो देशभक्ति,
दो नित्य सत्य हित लडने की
नस-नस प्राणो में आत्मशक्ति।

दो महावीर का बल विक्रम,
लाँघें समुद्र त्यागें अशक्ति,
सीता-स्वतत्रता गृह आवे,
हो भस्म स्वर्ण-लका विरक्ति,

जो राम-राज्य गाया तुमने
छाया है जिसका यश-वितान,
थे राव-रंक सब सुखी जहाँ
थे ज्ञानकर्म से मुखर प्राण,

युग-युग की दृढ शृङ्खला तोड,
है शुभ स्वराज्य का फिर बिहान
इस राष्ट्र-जागरण के युग में
कवि, उठो पुन तुम बन महान !

दाँड़ी-यात्रा

पूछता सिंधु था लहरो से
क्यों ज्वार अचानक तुम लाईं ?
लहरें बोली,—'क्या मनमोहन की
वेणु न तुमने सुन पाई ?'

रण-यात्रा में है चला आज
वृन्दावन का वंशीवाला।
बोला तब लवण-सिंधु पूजूँ,
'लावण्यमयी, जा कुछ ले आ!'

लहरें बोली, तट पर आकर
देखो, वह टोली है आई।
उद्ग्रीव सिंधु हो उठा मुखर
कैसी बाँकी झाँकी छाई ?

सब से आगे फहराता था
जय-ध्वजा, तिरंगा ध्वज प्यारा।
पीछे बजती थी बीन मधुर
वंशी सितार का स्वर प्यारा!

पूछा तरुओं ने आस-पास
यह है किस आसव की मात्रा ?
तब काली कोयल कुहुक उठी
यह बापू की दाँडी-यात्रा !

किस तरह चले, ये कौन चले
कब कहाँ चले, बोलो रानी !
सागर ने पूछा लहरों से--
कुछ तो बतलाओ कल्याणी !

लहरों ने मर्मर स्वर भर कर
बन ऊर्मि कथा मधु-भरी कही।
ओ, पारावार अपार, सुनो
इस यात्रा की कुछ बात सही !

जब ब्रिटिश राज्य के दूतों ने
कुछ भी न न्याय का मत माना,
अन्याय भंग करने को तब
बापू ने यह रण-प्रण ठाना।

आश्रम में गूँज उठा संदेश—
कल प्रात समर-यात्रा होगी,
जिसको चलना हो चले साथ,
जो हो अपने घर का योगी।

हल-चल-सी फैल गई पल में
जागी फिर साबरमती रात,
वीरों का सजने लगा संघ
होगा पावन प्रस्थान प्रात।

कब सोया कौन कहाँ निशि में
सबने उमंग के साज सजे,
नंगे फ़क़ीर के कुछ चेले
मतवालों ने पर्यंक तजे।

पति से यों पत्नी ने पूछा—
हे नाथ, साथ ले चलो मुझे।
'पगली! तेरा कुछ काम नहीं,
घर रहना ही कर्त्तव्य तुझे!'

'तुम जाओगे क्या एकाकी,
मैं रह न सकूँगी एकाकी,'
बोली यों पति से फिर पत्नी
अपनी चितवन को कर बाँकी।

पति चले, चली पत्नी पुलकित
मन में उत्साह अतुल उमंग,
स्वाहा कर सुख-वैभव विलास
ले ब्रह्मचर्य का व्रत अभंग!

भाई बहनों के पास गये
बोले, 'बहना! दो बिदा आज,
अपने मंगल जल अक्षत से
दो मेरे प्रण का कवच साज।'

बहनें बोलीं, 'भैया न बनेगा
यह एकाकी मौन गमन,
हम भी पीछे-पीछे पद पर
अनुगमन करेंगी सब बहन।'

भाई-बहनें चल पड़ी संग
था रङ्ग उमङ्गो में गहरा।
उत्सुकता ने सोने न दिया
जाग्रति ने दिया मधुर पहरा।

जननी के श्रीचरणो मे पड़
बोले बेटा, दो बिदा आज,
माता के आँचल में स्नेह
का सागर उमड़ा दूध-ब्याज।

जननी के उर का गर्व जगा
माँ के उर का अभिमान जगा,
तू धन्य पुत्र ! जो जननी के
हित बढ़ा युद्ध मे प्रेमपगा।

मा ने बेटे के मस्तक पर
रोचना किया अक्षत छोड़े,
आशीर्वाद वरदान प्राप्त कर
चले वीर साहस जोड़े।

चल पड़ी बहन, चल पड़े बंधु
चल पड़ी जननि चल पड़े पुत्र,
पति चले चली पत्नी उनकी
जुड़ गया स्नेह का सरस सूत्र।

कुछ चले किशोर-किशोरी भी
बापू के प्यार-भरे छौने,
कर्त्तव्य - गोद में खेल रहे
वात्सल्य-भाव के मृग-छौने !

क्या कहूँ वेश उनका सुन्दर,
मस्तक पर थी अक्षत-रोली,
अधरों पर थी मुस्कान मन्द
आँखो में रण-प्रण की होली।

खादी की साड़ी बहन सजी
खादी के कुर्ते बन्धु सजे,
चप्पल चरणों में समर साज
रण-दुंदुभि बन जो सतत बजे।

खादी के ताज सजे सिर पर
केसरिया पागो से बढ़कर,
ज्यो चाँद सैकड़ों उग आये
अवनी पर, भू के अंबर पर!

बच्चो, बूढ़ो, मा-बेटो की
भाई-बहनों की यह टोली,
झूमती चली मतवाली बन
उर पर खाने गोला-गोली!

बापू ले अपनी चिर-संगिनि
जो है उनकी लघु-सी लकुटी,
चल पड़े सुदृढ़ पग, सुदृढ़ बाहु
दृढ़ कर अपनी सीधी भृकुटी।

नतमस्तक उन्नत गर्व लिये
नतनयन स्नेह के भार झुके।
कटि कसे कछौटी खादी की
आजानबाहु, जो नहीं रुके।

उस दिन भारत के कोटि-कोटि
देवता सुमन अंजलि भर-भर,
बरसाने आये यान चढ़े
देखा न किसी ने उनको पर।

रुक गये जहाँ, झुक गये वही
कितने ही पुर औ' ग्राम-नगर,
पुर-वधुओं से वधुएँ बोलीं—
आये है बापू नयनागर!

ले दूध-दही, ले पुष्प-पत्र
ले फल-अहार, वृद्धा आई,
बापू के चरणो में संपति
की राशि झुकी, बलि हो आई।

बन गया समर का क्षेत्र वही
जिस स्थल बापू के चरण रुके,
जुड़ गई सभा नर-नारी की
लग गई भीड, तरु-पात रुके।

काँप उठीं दिशायें नीरव हो
छा गया एक स्वर निर्विकार,
भारत स्वतंत्र करने का प्रण
है यही, यही रण-मोक्ष-द्वार।

या तो होगा भारत स्वतन्त्र
कुछ दिवस रात के प्रहरो पर,
या, शव बन लहरेगा शरीर
मेरा समुद्र की लहरो पर!

वह अचल प्रतिज्ञा गूंज उठी
तरुओं में पातों-पातों में,
वह अटल प्रतिज्ञा समा गई
जनगण की बातों-बातों में।

बरसाने की आ गई याद
थरसाने की उस यात्रा में।
हो गया ध्वंस साम्राज्य-दंभ
जब लवण बना लघु मात्रा में।

नवयुग का नव आरंभ हुआ
कुछ नये निमक के टुकड़ों पर।
आजादी का इतिहास लिखा
डांडी के कंकड़-पत्थरों पर।

अनुनय

प्रेम के पागल पुजारी !
प्रेम के पागल भिखारी !

जल रही है आग घर में
जल रहा है घर तुम्हारा,
छेड़ते ही जा रहे तुम
प्रेम का निज एकतारा ?

तुम अरे, कितने अनारी !
मातृ-भू क्योंकर बिसारी ?

राष्ट्र का निर्माण हो जब,
विरह की ध्वनि तुम्हे भाई,
उठ सकेंगे किस तरह हम
जब तुम्हीं ने कटि झुकाई ?

आज तुम पर लाज सारी,
प्रेम के पागल पुजारी !

आज है रण का निमत्रण
धुन तुम्हें तब प्रीति से है,
आज अलको से उलझते
जब उलझना नीति से है;

बात क्या उलटी विचारी ?
प्रेम के पागल पुजारी ?

विश्व के इतिहास में
उल्लेख क्या होगा तुम्हारा ?
तुम रिझाते रूप थे,
जब पिस रहा था देश सारा !

यह कलक असह्य भारी !
प्रेम के पागल पुजारी !

देश की आशा तुम्ही हो.
राष्ट्र के भावी प्रणेता !
फिर विलास-विलीन कैसे ?
इन्द्रियों के चिर विजेता !

पार्थकुल के रक्तधारी !
प्रेम के पागल पुजारी !

रहे रूठी राधिका मत रुको,
मत उसको मनाओ,
देखती अपलक तुम्हे जो
लाज तुम उसकी बचाओ ।

द्रौपदी नंगी उघारी,
नयन से जलधार जारी !

आज वंशी छोड दो लो
पांचजन्य किशोर मेरे,
है खड़ी अक्षौहिणी
प्रतिशोध में कुरुक्षेत्र घेरे,

आज फिर रण की तयारी!
प्रेम के पागल पुजारी!

यह जवानी, ये उमगें,
यह नशा, यह जोश भारी,
देश को दो भीख प्यारे,
जग पडे क़िस्मत हमारी!

छिन्न हो कडियाँ हमारी,
जय मनायें हम तुम्हारी,

फिर सजे वशी तुम्हारी
फिर बजे वंशी तुम्हारी।
प्रेम के पागल पुजारी
मातृ-भू क्योंकर बिसारी ?

शहीद

प्राणो पर इतनी ममता
औ' स्वतत्रता का सौदा ?
बिना तेल के दीप जलाने
का है कठिन मसौदा !

आँसू बिखराते बीतेंगी
जलनी जीवन-घड़ियाँ।
बिना चढाये शीश, नही
टूटेंगी माँ की कड़ियाँ।

दुनिया में जीने का सबसे
सुन्दर मधुर तक़ाजा।
हो शहीद ! उठने दे
अपना फूलों भरा जनाजा।

नव झाँकी

घास पात के टुकड़ो पर
लुटती है माखन मिसरी
गजी और जाँघिया पर
पीताम्बर की सुधि बिसरी।

चक्की की घरघर में भूला
लेकर चक्र चलाना,
बेतो की बेदर्द मार में
सुना वेणु का गाना।

जजीरो ने चुरा लिया
वनमाला की छवि बाँकी,
देख सीकचो में आया हू
मोहन की नव झाँकी।

हथकड़ियाँ

आओ, आओ, हथकड़ियाँ
मेरी मणियों की लड़ियाँ !

मातृभूमि की सेवाओं की
स्वीकृति की जयमाल भली,
कृष्ण-तीर्थ ले चलनेवाली
पावन मंजुल मधुर गली,

जीवन की मधुमय घड़ियाँ !
आओ, आओ, हथकड़ियाँ !

कर में बँधो विजय-कंकण-सी,
उर में आत्मशक्ति लाओ,
जन्मभूमि के लिए शलभ-सा
मर जाना, हाँ, सिखलाओ;

स्वतन्त्रता की फुलझड़ियाँ !
आओ, आओ, हथकड़ियाँ !

नववर्ष

स्वागत ! जीवन के नवल वर्ष
आओ, नूतन-निर्माण लिये,
इस महा जागरण के युग में
जाग्रत जीवन अभिमान लिये;

दीनों दुखियों का त्राण लिये
मानवता का कल्याण लिये,
स्वागत ! नवयुग के नवल वर्ष !
आओ तुम स्वर्ण-बिहान लिये !

संसार-क्षितिज पर महाक्रान्ति
की ज्वालाओं के गान लिये,
मेरे भारत के लिए नई
प्रेरणा और नया उत्थान लिये;

मुर्दा शरीर में नये प्राण
प्राणों में नव अरमान लिये,
स्वागत ! स्वागत ! मेरे आगत !
आओ तुम स्वर्ण-बिहान लिये !

युग-युग तक नित पिसते आये
कृषकों को जीवन-दान लिये,
कंकाल-मात्र रह गये शेष
मजदूरों का नव त्राण लिये,

श्रमिकों का नव संगठन लिये,
पददलितों का उत्थान लिये,
स्वागत ! स्वागत ! मेरे आगत
आओ ! तुम स्वर्ण-बिहान लिये !

सत्ताधारी साम्राज्यवाद के
मद का चिर-अवसान लिये,
दुर्बल को अभयदान
भूखे को रोटी का सामान लिये;

जीवन में नूतन क्रान्ति
क्रान्ति में नये नये बलिदान लिये,
स्वागत ! जीवन के नवल वर्ष
आओ, तुम स्वर्ण-बिहान लिये !

त्रिपुरी कांग्रेस

था प्रात निकलने को जुलूस
जुड रात-रात भर नर-नारी,
उत्सुक बैठे पथ पर आकर
कब रथ निकले सज-धजधारी।

चल ग्राम-ग्राम से नगर-नगर से
वृद्ध बाल आये अगणित,
करने को लोचन सफल आज
भर देश-प्रेम से पावन चित।

पिसन्हरिया की मढ़िया सुन्दर
है जहाँ बनी गिरि के ऊपर,
कलचुरी-राज्य के गौरव का
ज्यों यश स्तंभ हो उठा प्रखर;

बस, उसी स्थान मे उठना था
यह त्रिपुरी का जुलूस भारी,
सारे भारत में हलचल थी
सुन-सुनकर जिसकी तैयारी!

बावन वर्षों की याद लिये
आये बावन हाथी मतंग,
इतिहास-पटल पर लिखने को
मतवालों के मन की उमंग।

सन् उन्तालिस की ग्यारह को
जब रात बदलकर बनी उषा,
जनगण में कोलाहल छाया
मन-प्राणों में छा गया नशा।

हो गये खड़े पथ पर सजकर
रथ लेकर, गज दिग्गज काले,
खींचने राष्ट्ररथ को आये
जयपथ पर ज्यों रण-मतवाले।

उस कुरुक्षेत्र की याद आ गई
सहसा इस कवि के मन में,
जब पाँच गाँव के लिए मचा
था यहाँ महाभारत क्षण में।

यों ही तब दिग्गज शूरवीर
प्रात होते ही रणपथ पर,
बढ़ते होंगे ले ध्वजा शिखर
योधा बैठे होंगे रथ पर।

छाई पूरब की लाली में
ज्यों ही दिनकर की उजियाली,
बज उठे शंख, दुंदुभि, मृदंग
मारू बाजे वैभवशाली।

बावन हाथी जुड़ गये
एक से लगे एक पीछे आगे,
बावन सारथी सवार हुए
जो मातृभूमि-पद-अनुरागे।

सिर पर विशुभ्र गाधी-टोपी
तन पर खादी के शुभ्र वस्त्र,
ये युद्ध चले करने योधा
जिनके न हाथ में एक शस्त्र।

घन घन घन घन घटा बोले
झन झन झन झन बाजी रणभेरी,
चल पडा हमारा यह जुलूस
पल में फिर लगी न कुछ देरी।

रथ था विशुभ्र ज्यो सत्य स्वय
हो मूर्तिमान वाहन बनकर,
आया हो ले चलने हमको
पावन स्वराज्य के जय-पथ पर।

था तरल तिरङ्गा लहर रहा
रथ के मस्तक को किये तुंग,
अभिनदन में दिखलाते थे
झुकते से सब सतपुडा-शृङ्ग,

सतपुड़ा-शृङ्ग, जिनमें बैठे थे
उत्सुक अगणित नरनारी,
चित्रित कर दी विधि ने जैसे
उनमें विचित्र जनता सारी।

अब चला हमारा यह जुलूस
तब कोटि कोटि उत्सुक दर्शक,
भर भर हाथों में नव प्रसून
बरसाने लगे, नयन अपलक।

पलकें अपलक, वाणी अवाक्
अन्तस गद्गद, तन पुलक भरे,
जागरण देख यह भारत का
दृग में सुख के नव अश्रु ढरे!

वह धन्य देश! जिसमें उठते
पददलित याद कर निज गौरव,
बलिवेदी पर बढ़ते शहीद
लाने को फिर स्वदेश वैभव।

नर्मदा इधर दक्षिण तट पर
गाती थी स्वागत-गीत गान।
सतपुड़ा उधर था हर्षफुल्ल
शिर विनत किये पथ में अजान!

सौभाग्य महाकोशल का था
जो गौरव-मंडित झुका भाल,
श्री कर्णदेव का गौरव ले
अभिनंदन करता था विशाल!

जागो फिर, मेरे कर्णदेव!
देखो आया है स्वर्ण-काल,
फिर, चला महाकोशल लिखने
भारत-जननी का भाग्य-भाल।

बढ रहा गोंडवाना फिर से
नापने देश की परिधि छोर।
जनगण जागे पददलित पुन
जनरण का उठता महा रोर!

जागो फिर, सोये कर्णदेव;
कर लो हर्षित अपने लोचन,—
त्रिपुरी से सजकर चली आज
फिर, गजसेना, घटा-ध्वनि घन!

जागो फिर, मेरे कर्णदेव,
जग रहा तुम्हारा पुण्यपूर्व,
तुम चले आज निर्मित करने
सुखमय स्वराष्ट्र अभिनव अपूर्व!

बावन सर बावन दर्पण बन
थे चित्र खींचते मौन जहाँ,
बावन वर्षों का वैभव ले
कांग्रेस झूमती चली वहाँ,

झूमी प्रतिपल गजगति बनकर
झूमी प्रतिपल गज-रथ चढकर
झूमी पग-पग में मग-मग में
जगमग मनकर, रण में बढकर।

पांचाल चला अभिमान लिये,
बंगाल चला बलिदान लिये,
मद्रास बढ़ा उत्थान लिये,
सी० पी० स्वागत के गान लिये।

गुजरात गर्व लेकर आया
बनकर पटेल की लोहमूर्त्ति,
राजेन्द्र किरीट सँवार चला
उत्कल बिहार बन प्राणस्फूर्त्ति;

ईसा की नव प्रतिमूर्त्ति लिये
आया सुन्दर सीमान्त प्रान्त,
ले वीर जवाहर को पहुँचा
जननी का उर—यह हिंद प्रान्त।

राजा जी की ले सौम्यमूर्त्ति
मद्रास चला नवगर्व लिये,
सौभाग्य चंद्र बंगाल लिये
जिसने नित अरिमद खर्व किये;

कितने ही यों ही देशरत्न
जिनके न रूप औ' ज्ञात नाम,
जन-सागर के तल में विलीन
भरते थे बल विक्रम प्रकाम।

बाजे बजते थे घमासान,
थे फड़क रहे सब अंग-अंग,
नस-नस में वीर भाव जागा
बह चली रक्त में नव उमंग;

जब बावन दिग्गज चले संग
अपने भारी डग पर धर डग,
तरणी रेवा में डोल उठी,
धरणी हो उठी विचल डगमग!

जयघोषो की तुमुल ध्वनि में
यह बढ़ा महोत्सव आगे फिर,
पहुँचा, था जहाँ लहर लेती
भारत की ध्वजा व्योम को तिर;

त्रिपुरी क्या बसी, अनूपम छवि
जैसे हो त्रिपुरी राज्य उठा,
धरणी के स्तर को चीर
पुरातन कोशल का साम्राज्य उठा,

उठ आये उसके सिंह-द्वार
उठ आई गुंबद मीनारें,
मेहराब उठे, शुचि शृङ्ग उठे
ध्वज, तोरण, कलसी, मीनारें।

झंडा-मडप मे आ करके
यह समा गया अगणित सागर,
झुक गये शीश रणवीरो के
था विजय-केतु उडता नभ पर।

था सजा मातृ-मदिर पावन
सतपुडा शिखर के कोने में,
भारत-जन-सागर सिमट गया
नर्मदा नदी के दोने में;

विंध्याचल, पुण्य पुरातन गिरि
उठता ऊपर ले अतुल गर्व,
वह आज हिमाचल से उज्ज्वल
जिसके गृह में जागरण-पर्व।

गौरीशंकर के शुभ्र शृङ्ग
मटमैले गिरि पर बलि जाते,
जिसने आमन्त्रित किया
देश के वीर बाँकुरे मदमाते,

विंध्याचल, मा की कटिकिंकिणि,
बज उठा आज हर्षित अपार,
जिनके पथ हेरा उत्कंठित
वे आये हैं देवता-द्वार,

भारत के कोटि-कोटि देवी-
देवता अतिथि हैं विंध्या में,
पर्वत-पर्वत पर गिरि-गिरि पर
दीवाली सजती संध्या में।

विंध्याचल, जिसके पंख कटे
हैं आज न उड़ सकता ऊपर,
अन्यथा, बना पुष्पक विमान
यह मंडराता फिरता भू-पर!

क्या बतलाऊं क्या था जुलूस?
यह है वह युग-युग का सपना।
भारत में जब होगा स्वराज्य
भारत यह जब होगा अपना,

टूटेंगी अपनी हथकड़ियां
ढह जायेगा यह राजतंत्र,
होगी भारत-जननी स्वतंत्र
होंगे भारतवासी स्वतंत्र।

चित्रकार श्री रामगोपाल विजयवर्गीय

खादी ही बढ, चरणों पर पड,
नूपुर सी लिपट मनायेगी,
खादी ही भारत से रूठी
आजादी को घर लायेगी।

अभियान-गीत

उठो, बढ़ो आगे, स्वतन्त्रता का
स्वागत - सम्मान करो,
वीर सिपाही बन करके
बलिवेदी पर प्रस्थान करो।

तन पर खादी सजी निराली
मन में देशभक्ति मतवाली,

कर में हो स्वराज्य का झंडा
उर में मा का ध्यान करो।
उठो, बढो आगे, स्वतन्त्रता का
स्वागत सम्मान करो।

लिये सत्य करवाल हाथ में
लिये अहिंसा ढाल साथ में,

बढो, वीर बाँकुरे समर में
घोर युद्ध घमसान करो,
उठो, बढो आगे, स्वतन्त्रता का
स्वागत - सम्मान करो।

जब तक एक रक्त कण तन में
पीछे हटो न तिल भर प्रण में,

विजय-मुकुट है हाथ तुम्हारे,
दृढ हो जीवन-दान करो,
उठो, बढो आगे, स्वतन्त्रता का
स्वागत - सम्मान करो।

राजवंदी के प्रति

बने वंदिनी के वदन में
वंदी तुम भी आप,
निखरेगी इससे अब प्रतिभा
गरिमा शक्ति अमाप!

खादी, चर्खा, देशभक्ति औ'
स्वतंत्रता की साध,
हे भारत के पुत्र! तुम्हारा
यही घोर अपराध!

जाओ उस कारागृह में
जो बना युगों से पूत,
जहाँ शान्ति के दूत बने थे
अमर क्रान्ति के दूत।

जहाँ महात्मा, तिलक, लाजपत
कितने अमर शहीद,
अपने पदचिह्नों से कर
आये हैं पीठ पुनीत।

जहाँ देश के आज जवाहर
लाल अनेको बद,
करने को निर्बंध देश को
लो,—बधन स्वच्छन्द।

सिहासन तुम चले उलटने
ओ विद्रोही वीर!
इसीलिए, यह दड—
तुम्हारे हाथो में जजीर।

सिखलाया तुमने भारत के
तरुणो को षड्यत्र,
'बनो स्वतत्र, पूर्व गौरव हो'
कितना विषधर मत्र?

आज इसी से मिला तुम्हे यह
कडियो का वरदान,
देखो—खिलती रहे अधर पर
यह मोहक मुसकान।

धन्य तुम्हारा जीवन दिन है
धन्य आज ये घडियाँ,
जयमाला शरमाती मन में
देख हाथ हथकडियाँ!

हाथ पाँव बाँधे वे चाहे
जितना है अधिकार,
जंजीरो से क़ैद न होगी
आत्मा मुक्त अपार।

कल तुम चले, आज हम आते
परसो उनकी बारी,
स्वागत का क्रम यही रहा तो
घर घर है तैयारी।

बाहर भी हम क्या हैं ?
सारा भारत कारागार,
क्या कह सकते भी मन के
अपने मुक्त विचार ?

पूछ रहे हो किया कौन सा
था तुमने अपराध ?
जीवन भर क्या किया--
जगाई कौन सलोनी साध ?

फूँका था विद्रोह शख
क्या कभी नही तुमने ही ?
खोले थे ये बँधे पख
क्या कभी नही तुमने ही ?

फिर, बापू से षड्यन्त्री से
किया खूब सपर्क,
पिया प्रेम से छुप चुप तुमने
आत्म - शक्ति - मधुपर्क।

टूटें लौह - शृखलायें
हो अपनी भीड अपार,
ढहे खड़ी ऊँची कराल
कारागृह की दीवार !

बेतवा का सत्याग्रह

गंगा से कहती थी यमुना
तुम बहन, दूर से आती हो,
जाने कितने ही प्रान्त नगर
छू करके तीर्थ बनाती हो।

कुछ कहो बहन, ना आज
देश की ऐसी पावन नव्य कथा,
जिससे जागृति की ज्योति मिले
यह भिले हृदय की तिमिर-व्यथा !

गंगा बोली, यमुने ! तुम भी
करती हो मुझसे अठखेली ?
तुम मुझसे पूछ रही रानी !
कुछ नये रंग की रँगरेली ?

तुमने वंशी का गान सुना,
तुमने गीता का ज्ञान सुना,
यमुने ! तुमको क्या बतलाऊँ ?
तुमने सब वेद पुराण सुना।

छोड़ो उन वेद पुराणो को,
छोडो गीता के गानो को,
कुछ नवयुग की प्रिय बात कहो,
छोडो भूले आख्यानो को।

तो नवयुग की तुम सखी बनी
नवयुग की तुमको लगी हुवा,
आ तो दूँ तुझको एक धौल
हो जाये तेरी ठीक दवा।

यमुने! तुम कितनी भोली हो?
भूली बन बात बनाती हो,
भूले जा सकते क्या मोहन
तुम मन की बात चुराती हो।

मै छीन नहीं लूँगी तुमसे
गोदी से श्याम सलोने को,
तुम बात बनाकर यो न लगाओ
काजल श्याम दिठौने को।

यमुने! तुम सदा सुहागिल हो
तुमको प्यारे घनश्याम रहे,
गगा गरीबिनी नही, धनी है
घर में राजाराम रहे।

यमुने! भूला जा सकता है
क्या गीता का भी अमर गान?
जो है अतीत का गर्व लिए
घेरे भविष्य औ' वर्तमान।

रानी ! मेरी तुम भूल गईं
इतिहास स्वय दुहराता है,
वह कुरुक्षेत्र का मनमोहन
अवतार नये धर आता है।

होता है फिर से द्वन्द्व-युद्ध
वह भारत नहीं अत होता,
कौरव पाडव फिर लड़ते हैं
धीरज हा हत ! विश्व खोता।

भूमिका बहुत तुम बाँध चुकीं
अब तुम अपना मतव्य कहो,
किस ओर चाहतीं ले जाना
वह मर्म कथा, गतव्य कहो।

गगा बोली—मेरी सजनी
मत आपस मे यो रार करो,
लो सुनो कथा मैं कहती हूँ
अब सुनो हृदय उल्लास भरो।

बुदेलखड जनपद महान
गूँजे हैं जिसके अमर गान,
मैं आज उसी की कहती हूँ
लघु कथा, किंतु अति कीर्तिवान।

बुदेलखड, सुन्दर स्वदेश
बेतवा जहाँ गलहार बनी,
बहती रहती सींचती धरा
वन उपवन में शृङ्गार बनी।

बुंदेलखंड, गौरव अखंड
जिसके वर वीर लड़ैतो ने,
कंपित दिगंत को किया
जिसे वर्णित है किया अल्हैतो ने।

इस नवयुग में भी नये वीर
ध्रुव धीर जहाँ पर वर्तमान,
जिसके बलिमय सत्याग्रह
के गीतो से अंबर गीतमान!

हम्मीरदेव का गौरवस्थल
अब भी हमीरपुर बसा जहाँ,
बेतवा जहाँ इठला इठला
खेला करती है यहाँ वहाँ।

थे एक दिवस, कुछ कृषक
जा रहे जिनके पास छदाम नही,
बेतवा पार कर, बेचारो के
धाम बने थे, जहाँ, वहीं।

घाटिया देखकर आ पहुँचा
बोला—'बदमाशो! चोरी कर,
आ पहुँचे तुम इस पार, इस तरह
अच्छा दो अब अपना 'कर'।'

देते क्या दीन दुखी किसान?
पैसा भी होता पास कही,
तो क्यों जाते जल में हिलकर
जाते क्यो चढ़कर, नाव नही?

बोले किसान, 'सरकार !
एक भी पैसा पास नहीं अपने,
फिर दूर घाट से हिल करके
आये इस पार यहाँ, हम ये।'

'मैं कुछ न जानता हूँ
करते हो बहस, उतारो तो कपड़े,
नंगे जाओ अपने घर को
देखता बहुत तुम हो अकड़े।'

घटिया बड़ा था क्रूर, निठुर
उसको था धन से बड़ा लोभ,
यदि छूट जाय धेला तो भी
होता था उसको बड़ा क्षोभ।

घटिया बेरहम हुआ, कहा—
आओ मेरे ओ जमादार !
ये बहस बहुत मुझसे करते
आये करके बेतवा पार !

'हैं घाट छोड़कर आये हम
कहते 'कर' तुम्हें नहीं देंगे',
'ले लो कपड़े लत्ते इनके
जो करना हो, ये कर लेंगे।'

जैसे मालिक, वैसे नौकर,
वे कड़े कसाई-से थे फिर,
बोले—'खोलो कपड़े लत्ते
वरना, हंटर खाओगे फिर।'

अधनंगे यों ही रहते हैं
भोले भाले मारे किसान,
उस पर प्रहार यह हा! विधिना!
यह न्याय निठुर तेरा महान!

कपड़े लत्ते खुलवा करके
उनको दे करके चपत चार,
भेजा दे एक लँगोटी भर
इस निर्धनता में कड़ी मार!

थे देख रहे इस नाटक को
कुछ सहृदय सज्जन वहीं खड़े,
उनका मन भी फट गया यदपि
थे जी के वे भी खूब कड़े।

सोचा—यह तो है अनाचार
अपने उन दीन किसानों पर,
हम फलते और फूलते हैं
बलि पर, जिनके एहसानों पर!

वे चले गए, रोते धोते
नंगे अधनंगे, ठिठुर ठिठुर,
पर, क्रूर घाटिया-सा तो होता
सबका हिरदय नहीं निठुर!

जो अश्रु गिरे थे धरती पर
वे अंगारे बनकर सुलगे,
ये खड़े देखते जो दर्शक
उनके मन में बल आग जगे!

जो खड़े हुऐं थे तेजस्वी
उनके कुल का सम्मान जगा,
हम खड़े रहे—हो अनाचार
उनके मन का अभिमान जगा !

तो धिक है ऐसे जीवन पर
यदि हमीं मरे, तो जिया कौन ?
इसका प्रतिकार करेंगे हम
थी हुई प्रतिज्ञा आज मौन ?

प्रतिकार करेंगे हम इसका
जो भी हो कारा फांसी हो,
अन्याय न देखेंगे अब फिर
जीवन है ही कितना दिन दो !

वे धन्य वीर ! अन्याय देखकर
जिनका खून उबल पडता,
वे धन्य धीर ! बलि होने को
जिनका हो प्राण मचल पडता !

ऐसे ही तो दो चार सत्य-
बल वालो से धरती स्थिर है,
अन्यथा न जाने कितनी ही बेला
यह धंस, उबरी फिर है।

घाटिया जुल्म करता रहता
पर, यह ज्यादती घटाने को,
तैयार हुए कुछ मतवाले
कर का अन्याय मिटाने को।

जिस मनमोहन की वंशी से
निद्रित भारत यह जाग उठा,
उसके ही कुछ गोपों का दल
बलि होने को अनुराग उठा।

जन जन में यह चर्चा फैली
मन मन में यह कौतूहल था,
सत्याग्रह का था दिवस कौन ?
पुर नगर प्रान्त में हलचल था !

रणभेरी बाज उठी घर घर
दर दर से सजा जुलूस चला,
बेतवा नदी सत्याग्रह को
देखने सभी जनगण उमड़ा।

ये तपसी तेजस्वी महान
जो देख न सकते अनाचार,
थे एक ओर, दूसरी ओर
घाटिया और थे जमादार।

बेतवा किनारे लगा हुआ था
आज अनोखा ही मेला,
बुंदेलखंड था उमड़ पड़ा
आई नवजीवन की बेला !

संघर्ष आज दोनों का था
जनता से औ प्रभुसत्ता से,
संघर्ष आज दोनों का था
लघुता से और महत्ता से।

प्रतिबिम्ब पड रहा था जल में
बुंदेलखंड के धीरो का,
जिनके चंदन-र्चाचत मस्तक
अचित सहृदय वरवीरो का।

बेतवा स्वय ही दर्पण बन
जैसे उनकी छवि झाँक रही,
शत शत आँखो शत शत छवि भर
अतर में गरिमा आँक रही।

थे ब्रिटिशराज के राजदूत
शासकगण अपनी सैन्य लिए,
थे इधर बुँदेलो के सपूत
पावन थे जिनके स्वच्छ हिए।

उन देशव्रती मतवालो की
रणभेरी बाजी थी पहले,
बेतवा करेंगे पार—आज हम
थे घाटिया सभी दहले।

बेतवा आज लहराती थी
लहरों में थी नूतन उमंग,
युग युग में आज बुँदेलों के
मुख पर चमका था रक्तरग!

कुछ तो जीवन इनमें जागा
कुछ तो यौवन इनमें जागा,
युग युग में सही, आज तो था
प्राणो का अलस तिमिर भागा।

आल्हा ऊदल की स्वर्गात्मा भी
तृप्त हुई होगी मन में,
जागे तो अपने कुछ जवान
जीवन तो है कुछ जन जन में।

है नहीं आज तलवार खड्ग
आत्मा पर, खूब चमकती है,
बलि होनेवालों के आगे
असि कुंठित बनी दबकती है।

बोलो भारत माता की जय
बोलो जनगणत्राता की जय!
गूँजी जय-ध्वनि यों बार बार
बढ़ चले वीरवर इधर अभय!

हथकड़ी बेड़ियाँ लिए खड़े थे
उधर लाल पगड़ीवाले,
ये इधर चले बेतवा पार
करने अपने कुछ मतवाले।

बेतवा सोचती धन्य भाग्य!
मैं इनके चरण पखार रही,
जो चले न्याय पर मिटने को
मैं जी भर उन्हे निहार रही।

लहरें आ आ बलखाती थीं
पल पल आ आ इठलाती थीं,
जाने था उनको हर्ष कौन
गुपचुप गुपचुप बतलाती थीं—

कहती थीं—है जाग्रत स्वदेश
अब जागेगा बुंदेलखंड,
आया है नवयुग का प्रभात
होगा फिर निज गौरव अखंड।

जब बिना शस्त्र ही लड़ने को
इन वीरों में जागा गौरव,
तब कौन रोक सकता उनको
आत्माहुति हो जिनका वैभव ?

उन्नत ललाट नवतेज लिए
मुख पर नव श्री थी खेल रही,
जाने किस तपसी की आभा
थी सभी भीरुता झेल रही।

जैसे हो सत्य स्वयं ही आ
कर श्री का मंडल बाँध रहा,
सब निष्प्रभ थे इनके समक्ष
ऐसा था ज्योति-प्रवाह बहा।

आँखों में थी करुणा बहती
अधरों पर थी मुसकान भरी,
उर में उमंग स्वर में तरंग
थी नूतन दिव्य ज्योति निखरी !

जयमाल लहरती थी
वक्षस्थल पर देवों की वरमाल बनी,
ये देवमूर्ति से थे त्रिमूर्ति
जिनको पा थी बेतवा धनी !

टूटी पडती थी भीड़ देखने
को वीरों का महोत्साह,
व्याकुलता, उत्सुकता, उत्कंठा,
सबका था अद्भुत प्रवाह।

थी एक मधुर-सी स्पृहा अमर
तब जन गण-मन में जाग रही,
जग रही एक थी आत्मशक्ति
भीरुता सभी थी भाग रही।

सबके मन में यह भाव जगा
था नूतन एक प्रभाव जगा।
सब कुछ होकर भी कुछ न हुए
सब में था एक अभाव जगा।

यदि होते सत्याग्रही, सत्य के
लिए अभय आगे बढ़ते,
तो होता जीवन-जन्म सफल
हम भी तब सुयश-शिखर चढ़ते।

है धन्य! यही हम देख रहे
आँखो के आगे वीर-कर्म।
अन्याय मिटाने जाते जो
यह दर्शन भी है पुण्य-धर्म।

ये ब्रिटिश राज के दूत—जिला
के अधिपति और दारोग़ा भी,
मत इधर बढो, अन्यथा बनोगे
बदी, उनको रोका भी।

क़ानून भग कर रहे, समझते
हम, इसका है हमें ध्यान,
तुम क़ैद करो, बदी कर लो
दो दंड कहे जो भी विधान!

है मान्य सभी, पर न्याय
यही कहता है हमसे बार बार—
कर उसे नही देना चाहिए
जो घाट छोडकर करे पार।'

कर लो बदी इनको इनने है
अभी न्याय को भग किया,
कारागृह ले जाओ इनको
इनने कारागृह स्वय लिया।

पड गई हाथ में हथकड़ियाँ
वे जीवन की मधुमय घडियॉ,
हम जिन्हे पहनकर खड खड
करते है लोहे की कडियाँ।

भारत मॉ की जयकार हुई
कूलो में और कछारो में,
गाँधीजी की जय जय गूँजी
लहरो में और कगारो में।

कारागृह भेजे गए वीर
वे चले हर्ष से मुसकाते,
जो बढ़ते दु:ख मिटाने को
वे दु:ख नहीं मन में लाते।

घर घर में ही कौतूहल था
दर दर में उनकी चर्चा थी।
स्वर स्वर में उनका नाम चढ़ा
उर उर में उनकी अर्चा थी।

बैठे है न्यायाधीश आज
न्यायालय में जनता उमडी,
न्यायालय में आये बदी थी
हाथों में हथकडी पड़ी।

अधरो पर थी मुसकान मद
मुख पर नवतेज छलकता था,
ये अपराधी है नहीं, वीर है
रह रह भाव झलकता था।

युग परिवर्तन का युग आया
अब चल न सकेगा अनाचार,
सोई जनता है जाग उठी
युग-धर्म रहा सबको पुकार।

रह रह बढ़ती थी अधिक भीड़
रह रह जनता होती अधीर,
क्या दड बदियो को मिलता
था एक प्रश्न, थी एक पीर।

क्या निर्णय न्यायाधीश करें
क्या बने आज सबका विधान ?
ये दोषी है या नहीं यही
जिज्ञासा थी सबमें समान।

है घाट एक ही सीमा तक
हो सकता घाट असीम नहीं,
फिर सभी किनारे कर लेना
हो सकता है यह न्याय नहीं ?

गभीर थके चिंतन में पड़
जज उठे, भीड भी उमड़ पडी,
क्या निर्णय होता ? सुनने को
जनता थी आकर द्वार खड़ी।

जज बोले—'नहीं घाट की सीमा
की है बनी जहाँ रेखा,
उसके भीतर आकर 'कर' देना
है नहीं कहीं हमने देखा।

जो भी सीमा को छोड़
घाट से दूर, नदी से हैं आते,
उन पर, 'कर' नही लिया जा सकता
किसी न्याय के भी नाते।

ये अपराधी है नही, नही
अपराध यहाँ कोई बनता,
इसलिए, मुक्त ये किए गए
हर्षध्वनि में डूबी जनता !

इन धीर वीर बुंदेलो ने
अपने मस्तक पर ले प्रहार,
कर दिया सदा के लिए बद
दीनों दुखियों का अनाचार।

ये धन्य अग्रणी ! दीन-बधु
जो उठा गरल को पीते है,
ये शिवशकर, ये प्रलयंकर
जग को अमृत दे जीते है।

उन बदीजन की अरुणाभा
थी विजय आरती साज रही,
गाने को स्वागत—विजय-गीत
थी सुकवि भारती साज रही!

हो गया घाटिया पीत वर्ण
हत कान्ति-दर्प अभिमान गया,
नत मस्तक वह लौटा अधीर
उसका वंचित अरमान गया।

तीनो ही थे हो गए मुक्त
कर हुआ मुक्त, अन्याय युक्त,
वे आये दीन किसान जहाँ
जो थे पहले ही दु:ख युक्त!

जिनके कपडे लत्ते लेकर
घाटिया बहुत ही अकडा था,
अन्यायी का था गर्व गलित
न्यायी का ऊपर पलडा था।

जनता में आया जोश कहा—
'सब चलो बेतवा पार करें,
अधिकार मिला, उपयोग करें
युग युग का यह अन्याय हरें।

जागी होगी करुणा अवश्य ही
उस दिन, जगन्नियता की,
संकल्प उठा जिस दिन मन में
ये चले वीरवर एकाकी !

कुछ अस्त्र नही, कुछ शस्त्र नही,
कुछ सेना, साथी साथ नही,
ये चले युद्ध करने केवल
था सत्य न्याय ही शक्ति यही !

उन रघुपति की आ गई याद
जो एक दिवस थे इसी भाँति,
चल पडे युद्ध करने प्रबुद्ध
पैदल, रथ गज की थी न पाँति।

बरसी थी नभ से सुमन - राशि
उन रघुवशी वर वीरो पर,
दशमुख बिध पद पर लोट गए
जिनके तेजस्वी तीरो पर।

अब तो क्या था ? वह सभी भीड़
पानी में उतरी पाँव पाँव,
उस पार चली, इस पार चली
था आज न घाटिया का न नाँव।

यह था न, घाटिया हो न वहाँ
पर आज पराजित बना मूक,
देखता रहा सब जड बनकर
उर में उठती थी एक हूक।

वह भी था वीर बुंदेलखंड का
उसमें भी था एक हृदय,
था सोते से जागा जैसे
बोला बुंदेलवीरो की जय।

वह सत्याग्रह, वह जागृति-क्षण
जय ध्वनि जो गूँजी प्रहरो में।
है लिखा मौन इतिहास आज
बेतवा नदी की लहरो में।

घाटिया और वे जमादार
थे किए जिन्होने अनाचार,
आये लज्जा से विगलित हो
नत मस्तक दृग में सजल धार।

उन नेताओ के चरणो में
झुक किया सभी ने ही प्रणाम,
बुंदेलखड की जय गूँजी
थी हर्ष हिलोरें वे प्रकाम।

नेता बोले 'भाई मेरे
इसमें न तुम्हारा रंच दोष,
नासमझी ही का कारण है
तुम भी भरते हो राज्यकोश।

माँगो तुम क्षमा किसानो से
इनकी सेवा एहसानो से,
जिन पर था तुमने किया जुल्म
इन मूक बने भगवानो से।'

घाटिया और सब जमादार
पहुँचे उनके भी पास वहाँ,
पर, वे किसान झुक गए प्रथम
यह क्या करते हैं आप यहाँ ?

हम दीन हीन निर्धन मजूर
तुम मालिक हो सरकार अभी ?
है खिया गया तन नहीं पीटने से
नित खाते मार सभी !

क्या हुआ आज तुम झुकते हो ?
दे रहे हमें सम्मान दान,
पर कल से यही प्रहार बढ़े
हैं, इसीलिए, निर्मित किसान !

भगवान ! कहाँ तुम सोते हो ?
कितने युग का पालक महान।
जुड़ता है तब निर्मित करते
सब कहते हैं जिसको किसान।

अब भी न तुम्हारी आँखों में
यदि बही सजल करुणा धारा,
पिसता ही यों रह जायेगा
तो दलित कृषक जनगण सारा !

यमुना गंगा के गले डाल
गलबाहीं बोली चलो बहे।
जग रहा हमारा राष्ट्र आज
चल सागर से संदेश कहे।

हमको ऐसे युवक चाहिए

ब्रह्मचर्य से मुखमंडल पर
चमक रहा हो तेज अपरिमित,
जिनका हो सुगठित शरीर
दृढ़ भुजदंडों में बल हो शोभित।

जिनका हो उन्नत ललाट
हो निर्मल दृष्टि, ज्ञान से विकसित,
उर में हो उत्साह उच्छ्वसित।
साहस शक्ति शौर्य हो संचित।

देशप्रेम से उमड़ रहा हो
जिनकी वाणी में जय जय स्वर,
हमको ऐसे युवक चाहिए
सकें देश का जो संकट हर!

रस विलास के रहे न लोलुप
जिनमें हो विराग वैभव का,
अतुल त्याग हो छिपा देशहित
जिन्हें गर्व हो निज गौरव का।

सेवाव्रत में जो दीक्षित हों
दीन दुखी के दुख से कातर,
पर सताप दूर करने को
ललक रहा हो जिनका अंतर।

बने देश के हित वैरागी
जो अपना घरबार छोड़कर,
हमको ऐसे युवक चाहिए
सकें देश का जो सकट हर।

सदा सत्य पथ के अनुयायी
जिन्हे अनृत से मन में भय हो,
दुर्बल के बल बनने के हित
जिनमें शाश्वत भाव उदय हो।

जिन्हे देश के बधन लखकर
कुछ न सुहाता हो सुख-साधन,
स्वतंत्रता की रटन अधर में
आज़ादी जिनका आराधन।

सिर को सुमन समझकर जो
अर्पित कर सकते हो चरणो पर,
हमको ऐसे युवक चाहिए
सकें देश का जो सकट हर।

प्राण और प्रण

मेरे जीते मैं देखूँ
तेरे पैरो में कड़ियाँ ?
क्यो न टूट पडती है मुझ पर
तो नभ की फुलझडियाँ ?

यह असह्य अपमान
जलाता है अन्तर में ज्वाला।
माँ ! कैसे मैं ही पी लूँ
प्रतिशोध गरल का प्याला ?

प्राण और प्रण की बाज़ी का
लगा हुआ है फेरा।
उतरेंगी तेरी क़ड़ियाँ
या उतरेगा सिर मेरा !

उगता राष्ट्र

आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत सघर्षों में।
कहीं विजय है कही पराजय
राष्ट्र उगा करता वर्षों में।

वीरव्रती है डटे समर में
भीरु खडे है बनकर दर्शक,
अपने तन का मोह जिन्हे हो
उनको रण क्या हो आकर्षक ?

हम तो रण - ककण पहने है
मरण हमें त्योहार - पर्व है,
पुरुष पराक्रम दिखलाते है
बल-विक्रम का जिन्हें गर्व है।

मिलता है उत्कर्ष सभी को
पार उतर कर अपकर्षों में।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत सघर्षों में।

वृद्धो से लड़ रहा तरुण दल
उनमें भी सेवा-उमग है,
स्वतत्रता के नव गीतों में
साम्यवाद का चढ़ा रग है।

भू-पतियो से कृषक लड़ रहे
धनिको से है श्रमिक युद्ध-रत,
जीवन नहीं, जीविका चहिए
गरज रहा है आज लोकमत !

धधकी महा उदर की ज्वाला
रणचडी के प्रण-हर्षों में।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत सघर्षों में।

साम्राज्यों की नींव कँप रहीं
कँपतीं राज्यों की प्राचीरें,
जन-सत्ता जग पडी आज है
अब असह्य जनता की पीरें।

आज दुर्ग की ईंटें ढहतीं
बकिम भ्रकुटि तनी राजो में,
जहाँ क्रूर ताडव प्रभुता का
लज्जा लुटती है ताजों में।

सिहद्वार खुल गए सदा को
किसी तपस्वी के स्पर्शों में।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत सघर्षों में।

हम तो हैं उनके मतवाले
बलि-पथ पर जो रक्त चढ़ाते,
विजय मिले, या हिले पराजय
अपने शीश दान कर जाते।

हम तो हैं उनके मतवाले
कौन नही होगा मतवाला ?
जिसने यह भारत उँगली पर
उठा लिया, युग-भार सँभाला।

उन विशाल बाँहो के बल पर
जय अपनी रण दुर्धर्षों में।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा।
अपना शत-शत संघर्षों में।

धर्मों के पाखंडवाद का
भ्रम मिटता है धीरे-धीरे,
राष्ट्र-धर्म जग रहा मोक्ष-प्रद
गगा यमुना तीरे-तीरे।

आज मातृ-मंदिर उठता है
बलिदानो की अचल शिला पर,
तरल तिरगा लहर रहा है
विजय-केतु बन सबके ऊपर।

कोटि-कोटि चरणो की ध्वनि में
कोटि-कोटि स्वर के घर्षों में।
आज राष्ट्र निर्माण हो रहा
अपना शत-शत संघर्षों में।

जागरण

आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया,
नवयुग ने नव तन नव मन से
नव चेतन है लहराया।

आज पददलित पुन उठ रहे
सह न सका अपमान अधिक चित,
पद-रज भी ठोकर खा करके
सिर पर चढ़ आती उत्तेजित।

बंदीगृह के टूट चुके हैं
लौह-कपाट पद-प्रहार से,
हथकड़ियो की लड़ियाँ टूटी
वीरो के बलिदान-भार से।

विद्रोही हैं राष्ट्र-विधाता
सिमटी मायावी की माया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

आज गुलामो के भी दिल में
उमड़े आजादी के शोले,
जुगनू से लगते आँखों में
विस्फोटक ये बम के गोले।

महानाश का राग छेड़ते
बढ़ते आगे विप्लववाले,
कालकूट के तिक्त घूँट को
पीते हैं मधु-सा मतवाले।

सिंधु बिंदु में आ सिमटा है
वह उत्साह रक्त में छाया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

अपने घर पर आग लगाकर
फाग खेलते हैं मतवाले,
शोणित के रँग से रँगते हैं
मतवालो के कवच निराले।

नहीं हाथ में धनुष-बाण है
नहीं चक्र शूली कृपाण है,
लड़ते हैं फिर भी मतवाले
शीश सत्य का शिरस्त्राण है।

बलिदानो के मुंडमाल से
हरि का सिंहासन थर्राया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

मिटी निराशा की अँधियाली
आशा की अरुणिमा उषा है,
नव शोणित की लहर उठी है
विगत हुई कालिमा निशा है।

भुज दडो के लौह दंड में
वज्र-शक्ति जग रही आज है,
जिसके वक्षस्थल में बल है
उसके सिर पर सदा ताज है।

आज आत्मबल ऊपर उठता
पशु-बल पद-तल पर झुक आया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

बढ चलते जड़ चरण चपल हो
रण-प्रागण में हृदय हुलसता,
वैभव के विलास के गृह में
त्यागी का तप तेज झुलसता।

आज मरण में जीवन जगता,
यों तो जीवन बना भार है,
आज़ादी की नींव बनें हम
यह सबके मन की पुकार है।

आत्मत्याग की अमर-भावना ने
मृतकों को अमृत पिलाया,
आज जागरण है स्वदेश में
पलट रही है अपनी काया।

अनुरोध

[काँग्रेस से सन्यास ग्रहण करने पर महात्मा जी के प्रति
यह अनुरोध लिखा गया था।]

साबरमती आश्रमवाले !
ओ दाडी-यात्रा वाले !
यह वर्धा में कौन मौन व्रत
ले बैठे ओ मतवाले ?

इधर आओ, बतलाओ राह,
हो रहे कोटि कोटि गुमराह।

हमें त्याग कर तुम बैठे
तब कहो कहाँ हम जायें ?
भूल रहे हैं, भटक रहे हैं,
कब तक अब भरमायें ?

करो पूरी इतनी सी साध,
आज तुम क्षमा करो अपराध !

तुम मत चूको, चूक जायें हम
हम तो हैं नादान,
तुम मत भूलो, भूल जायें हम
हम तो हैं अनजान।

'नहीं', तुम औ कहो मत नहीं,
कहोगे जहाँ, मिटेंगी वहीं!

सही नहीं जाती है हमसे
और अधिक नाराजी,
बापू! बोलो कहाँ लगा दें
इन प्राणों की बाजी!

हमारी मिट जायेगी पीर,
चलो हाँ चलो गोमती तीर!

आज अकेला ही है अपना
सेनापति मतिमान!
धीरज दो सतप्त हृदय को
आओ तपोनिधान!

न भूलो अपना प्रण केशव!
ले चलो जहाँ विजय - उत्सव!

एक बार फिर, बजे समरदुंदुभि
उमड़े उत्साह,
एक बार फिर, मुर्दों में
जागे लड़ने की चाह!

करें हम अपने को बलिदान,
कहे जग—'जय जय हिन्दुस्तान!'

विश्राम

किस तरह स्वागत करूँ ? आ लाडले !
चाहता जी चरण तेरे चूम लूँ,
गोद ले तुझको तनिक हो लूँ सुखी,
प्यार के हिन्दोल पर चढ़ झूम लूँ।

तू अभी तो है बडा सुकुमार ही
हाय ! नगे पाँव शूलो में गया,
धन्य तेरा प्रेम ! तू ने क्या कहा ?
'माँ ! अरी मैं दौड फूलो मे गया।'

लाल ! यदि तुझसे मिले जिस देश को
क्यो सहेगा वह किसी भी क्लेश को ?
भक्त बनकर वारता है प्राण जो
मानकर भगवान ही निज देश को ?

ऐ हठीले ! आ ठहर तू अब न जा
कुछ दिनो तो गेह में विश्राम कर,
क्या कहा—विश्राम है तब तक कहाँ ?
है छिडा स्वातंत्र्य का जब तक समर !

महाभिनिष्क्रमण

[राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोस के सहसा गृह त्यागकर चले जाने पर लिखित]

शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृह-त्याग कैसा ?
देश के अनुराग ही में
आज मौन विराग कैसा ?

नग्न तन, पद नग्न, ले
परिधेय मात्र, सघन अँधेरे,
आज असमय में अकेले
चल पड़े किस ओर मेरे !

कौन है वह पथ तुम्हारा
कौन-सा अब लक्ष्य माना ?
कौन सी वह है दिशा
कुछ नहीं संकेत जाना।

हम कहाँ आयें किधर
उस देश का है भाग कैसा ?
शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृह-त्याग कैसा ?

खो नहीं जाना कहीं
दीवानगी में ऐ रँगीले,
रँग न लेना वस्त्र अपने
कहीं गैरिक रंग ही ले।

बिना रँग के ही रँगे तुम
चिर विरागी, ओ हठीले,
और फिर सन्यास कैसा
चाहिए? जिसको यती लें!

आज फिर किस विजन वन में
सज रहा यह याग कैसा?
शीत की निर्मम दिशा में
आज यह गृह-त्याग कैसा?

थी व्यथा वह कौन-सी?
चुपचाप की तुमने तयारी,
भ्रान्त हैं उद्‌भ्रात हम
मिलती नहीं आहट तुम्हारी।

भूल सकते हैं कभी भी
क्या तुम्हे मेरे पुजारी?
विकल देश पुकारता है
तुम कहाँ? मेरे भिखारी!

क्यों नहीं तुम बोलते
यह मौन से अनुराग कैसा?
शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृह-त्याग कैसा?

लौट आओ ओ हठीले !
जन्मभूमि तुम्हे बुलाती,
लौट आओ लाडले, रूठे
तुम्हें जननी मनाती।

बधु व्याकुल, देश व्याकुल
जाति व्याकुल हैं तुम्हारी,
तुम कहीं जाओ नहीं
यों क्षुब्ध हो, ओ क्रान्तिकारी !

आज घर घर गूँजता है
शोक गीत विहाग कैसा ?
शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृह-त्याग कैसा ?

ढूँढ़ते हैं वे तुम्हे—
साम्राज्य है जिनका यहाँ पर,
हाथ में ले हथकडी
तुम हो यती ! मेरे जहाँ पर।

प्राण आहुति चले देने
चाहते थे तन तुम्हारा,
आत्मा को बाँधती है
खूब इनकी लौह-कारा।

हँस रहा है नभ उधर
यह व्यग का है राग कैसा ?
शीत की निर्मम निशा में
आज यह गृह-त्याग कैसा ?

क्रान्तिकुमारी

मै आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वसो के प्रलय-प्रहारों में,
मै आती हूँ धर कोटि चरण
युग के अनत हुकारों में।

मै आती हूँ ले नव भाषा,
मै आती ले नव अभिलाषा,

नव शब्द छंद लय ताल मीड
नव गमको की गुजारो में,
मै आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसो के प्रलय प्रहारो में।

चीरती रूढ़ियों की छाती,
बिजली बन तमसा को ढाती,

मै आती हूँ कधे पर चढ़
मृत्युंजय अभय-कुमारो में।
मै आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वसों के प्रलय प्रहारों में।

जड गतानुगतिका हिला हिला,
अंधानुकरण पर बनी शिला,

आती हूँ कसक कराह लिए
मैं मरती हूँ बेजारो में,
मैं आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसो के प्रलय प्रहारो में।

पद दलितों को मैं उकसाती,
पतितो का पथ मैं बन जाती,

उल्का, तारा, शनि, केतु लिए
खेला करती अंगारो में।
मैं आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसों के प्रलय प्रहारो में।

तोडती नियम औ' धारायें,
फोडती किले औ' कारायें,

जंजीरें बेडी मृत्यु - दंड,
फाँसी के हाहाकारो में।
मैं आती हूँ बन नई सृष्टि
ध्वंसो के प्रलय प्रहारों में।

कवि को देती वरदान नये,
रवि को देती मैदान नये,
छवि को देती उद्यान नये,
हवि को देती बलिदान नये,

मैं ध्वंस-सृजन के चरणों से
नित अपना पथ बनाती हूँ।
जब आती हूँ।

निर्बल के कर की ढाल बनी
निर्धन के कर करवाल बनी,
धन-दर्पित उद्धत क्रूर कुटिल
कामी—प्राणो का काल बनी,

युग युग के गौरव छत्रमुकुट में
बढ बढ आग लगाती हूँ।
जब आती हूँ।

मैं विगत अतीत पुनीत पाप की
परिभाषायें बिखराती,
नव सस्कार, नव नव विचार,
नव भाव, कल्पना उपजाती,

निर्भय कवि की वाणी बनकर,
वीणा के तार बजाती हूँ।
जब आती हूँ।

विद्रोह, भ्रान्ति, विप्लव, अशान्ति,
उत्पात, अराजकता भरती,
मैं सप्तसिंधु खौला करके
भू अबर सभी एक करती,

फूँकती जागरण-शख, पख मैं
बँधे हुए खुलवाती हूँ।
जब आती हूँ।

चित्रकार. श्री एन० मलिक

खड खड भूखंड, अड
ब्रह्मांड पिड नभ में डोलें
मेरे मृत्युञ्जय की टोली
जब मां की जय जय बोले!

विप्लव-गीत

रवि गिरने दे, शशि गिरने दे
गिरने दे, तारक सारे,
अचल हिमाचल चल होने दे
जलधि खौलकर फुंकारे,

धरा धसकने दे पग-पग में
शैल खिसकने दे जल में
दाहक-प्रभुता का मोहक
आवरण मसकने दे पल में।

खंड, खंड भूखंड, अंड ब्रह्मांड
पिंड नभ में डोलें,
मेरे मृत्युंजय की टोली
जब माँ की जय-जय बोले!

धूम्रकेतु चमके, चमके शनि,
चमके राहु, त्रास पल-पल,
होवें ग्रह बारहो केंद्रित
विकल करें रव दिग्मंडल,

मातायें छोडे पुत्रो को
पति को छोडें बालायें,
अपनी अपनी पडे सभी को
प्राणो के लाले छाये,

धुआँधार हो, अधकार हो
कही न कुछ सूझे देखे,
स्वय विधाता भस्मसात् हो
भूल जाय लिखना लेखे।

सप्तसिधु बारहो दिवाकर
चौदह भुवन लोक थहरे,
बहे पवन उन्चास
नाश का ऐसा अतिम क्षण लहरे,

वज्रपात हो, बिजली कडके
थर-थर काँपे सब जल-थल,
अतल, वितल, पाताल, रसातल
भूतल निखिल सृष्टि-मडल!

महाप्रलय होने दे निष्ठुर!
कर विनाश की तैयारी।
नष्टभ्रष्ट हो पराधीनता
यो ही मानव की सारी!

प्रयाण-गीत

युग युग सोते रहे आज तक
जागो मेरे वीरो तो!
तरकस में बँधे हुए जीर्ण
अब चमको मेरे तीरो तो!

वह भी क्या जीवन है जिसमे
हो यौवन की लहर नहीं?
चढ खराद पर, तिलतिल कटकर
चमको मेरे हीरो तो!

यौवन क्या जिसके मुखपर
लहराता शोणित-रग नही?
यौवन क्या जिसमें आगे
बढने की अमर उमग नही?

शैशव ही सुखमय है उस
यौवन के आने के पहले,
मर मर कर जीने की जिसमें
उठती तरल तरग नही!

चढती हुई जवानी में तो
आगे चढ जाओ प्यारे!
बढती हुई रवानी में तो
आगे बढ़ जाओ प्यारे!

पीछे ही हटना है फिर
आगे जाने का समय नही,
इस उभार की यादगार मे
कुछ तो गढ़ जाओ प्यारे!

रूपराशि की दीप शिखा पर
मरने वाले परवाने!
प्रेम-प्रेम के मधुर नाम को
रटने वाले दीवाने!

वह भी क्या है प्रेम न जिसमें
छिपी देश की आग रहे?
जन्मभूमि के लिए आज मर
अमर! तुझे दुनिया जाने!

ओ नौजवान !

ओ नौजवान !

तेरी भ्रू-भगो से सीखा करता
है प्रलय नृत्य करना,
तेरी वाणी से सीखा करता
काल ताल अपनी भरना।

तेरी उमग से सिधु तरगें
सीखा करती हैं उठना,
तेरे मानस से सीखा करता
मगनागन विशाल बनना।

मेरे असीम ! सीमा मत बन
तेरी ही पृथ्वी आसमान !
ओ नौजवान !

तेरे उभार के साथ उभरती है
दुनिया में सुंदरता,
तेरे निखार के साथ निखरती है
दुनिया में मानवता।

बनता है जर्जर विश्व तरुण
छाती है दिशि दिशि में लाली,
पतझर में खिलता नवजीवन
हँस उठती तरु में हरियाली!

बुलबुल गुल को चटकाती है
कोकिल भरती है नई तान।
ओ नौजवान!

तेरी मस्ती के आलम में
दुनिया को मिल जाती मस्ती,
तेरी हस्ती की बरकत में
सब पाते हैं अपनी हस्ती।

क्या लेगा कोई दान और
तू जान किए रहता सस्ती,
तेरे बसने के साथ साथ
है एक नई बसती बस्ती।

तू खुद ही एक ज़माना है
गा रही जवानी जहाँ गान!
ओ नौजवान!
यह क़ौम तुझे ही देख देख
होती मन में मतवाली है,

फिर से बुझे हुए दीपक में
उठने लगती लाली है।

जो मुरझ चुके पानी न मिला
आती उनमें हरियाली है,
तू आता क्या तेरे प्रकाश से
फट जाती अँधियाली है?

तू प्राची का पावन प्रभात
तू कचन किरणो का वितान!
ओ नौजवान!

तू नई पौध अरमानो का
तू नया राग मस्तानो का,
तू नया रग, तू नया ढग
दीवानो का, मर्दानो का।

तू नया जोश, तू नया होश
अपनो का औ' बेगानों का,
तू नया जमाना, नई शान
ईमान नया, ईमानो का!

है उथल पुथल होती रहती
लख तेरे पाँवो के निशान।
ओ नौजवान!

अभियान-गीत

हम मातृ-भूमि के सैनिक है,
आजादी के मतवाले है,
बलिवेदी पर हँस-हँस करके,
निज शीश चढानेवाले है।

केसरिया बाना पहन लिया,
तब फिर प्राणो का मोह कहाँ ?
जब बने देश के सन्यासी,
नारी-बच्चो का छोह कहाँ ?

जननी के वीर पुजारी है,
सर्वस्व लुटानेवाले है,
हम मातृ-भूमि के सैनिक है,
आजादी के मतवाले है।

अब देश-प्रेम की रङ्गत में,
रँग गया हमारा यह जीवन।
उसके ही लिए समर्पित है,
सब कुछ अपना यह तन-मन-धन।

आगे को बढा चरण रण में,
पीछे न हटानेवाले है,
हम मातृ-भूमि के सैनिक है,
आजादी के मतवाले है।

सन्तान शूर-वीरो की है,
हम दास नही कहलायेंगे,
या तो स्वतन्त्र हो जायेंगे,
या रण में मर मिट जायेंगे,

हम अमर शहीदो की टोली मे,
नाम लिखानेवाले है,
हम मातृ-भूमि के सैनिक है,
आजादी के मतवाले है।

ऐतिहासिक उपवास

हे प्रबुद्ध !
आज तुम करने चले पुन युद्ध ?
अग्नि में प्रवेश कर बनने चले आत्म-शुद्ध
मुक्त चले करने निज द्वार रुद्ध
हे अक्रुद्ध !

क्षुब्ध हुए हमसे क्या राष्ट्रदेव !
महादेव !
आज फिर गरल उठा अधरो से लगा लिया
करुणामय !
किस पर यह महारोष ?
हम विमूढ
समझ नही पाते कर्त्तव्य गूढ़ ?

यो ही विश्वप्रागण में आज महा-अग्निकाड,
पश्चिम से प्राची तक
ज्वालायें हे प्रकाड !
लगता है नष्टमान विश्व-भाड !

तपोनिधे ! तब है यह व्रत-विधान !
तुम हो आत्म-बल निधान !
किन्तु, हम तो अशक्त,
धैर्य हो रहा है त्यक्त !
तुम हो उपवासरत निराहार
निखिल राष्ट्र निराहार !
इस पद-निक्षेप में
रुद्ध आज राष्ट्र-श्वास !
आज किधर एकाकी तुम
कर रहे अचिर प्रवास ?

यो ही राष्ट्र क्षत-विक्षत
रक्त भरा है जन-पथ,
बढता नही गति-रथ,

भस्मीभूत बने-भवन,
निर्जन है बने सदन,
अग्नि-दहन !
आज गहन !

देख देख हाहाकार;
सूत्रधार !
तुम भी क्या कूद पडे ?
हममें आ हुए खडे,
चलने को साथ साथ,
जलने को साथ साथ !

तुम न चलो साथ साथ,
तुम न जलो साथ साथ,
हम पर हो वरद हाथ
हम न रहेंगे अनाथ !

जनता के हृदय प्राण !
तुमसे ही राष्ट्र की धमनियों में
जीवन है प्रवहमान !
चेतन है प्रवहमान !
यौवन है प्रवहमान !

हे दधीचि !
अस्थियों को आज नाश
करो मत करुणानिधान !
ये ही वज्र के समान
ध्वस्त करेंगी महर्षि !
पाप-ताप,
असुरों की शक्ति सभी
युग युग का अभिशाप ।

व्रत-समाप्ति

आज दिवस है व्रत समाप्ति का, महाशान्ति का पर्व,
आज सुखद सवाद देश को, आज हमे है गर्व,

आज मेघ हट गए, खिल उठी,
नभ में निर्मल राका,
बापू चला, तुम्हारे युग का
फिर मगलमय साका!

आज हुए सताप दुरित, अभिशाप पाप सब खर्व,
आज दिवस है व्रत समाप्ति का, महाशान्ति का पर्व!

आज राष्ट्र की शिथिल धमनियो मे
जीवन की धारा,
नव जीवन, नव चेतन मन मे,
आज दुरित दुख सारा,

बापू! बने रहे तुम, बन जायेगी विधियाँ सब!
आज दिवस है व्रत समाप्ति का, महाशान्ति का पर्व!

बुभुक्षित बंगाल

यह अपने घर के आँगन में
कैसा हाहाकार मचा ?
दो मुट्ठी है अन्न न मिलता
निष्ठुर नर-संहार मचा,

त्राता ने है हाथ समेटा,
बैठा दूर विधाता है।
भूखे तड़प रहे हैं भाई,
बहनें, भूखी माता है।

वह देखो पथ—पर कितने ही
हाथ उठ रहे हैं ऊपर,
रोटी एक सामने है
सैकड़ों खड़े हैं नारी-नर,

'रोटी-रोटी' की पुकार है
राहों में चौराहों में।
'भात-भात' की है गुहार
आहों में और कराहों में।

कितने ही शव निकल चुके
मरकर भूखों की मारों में,
देख रहे अधमरे तुम्हे,
डूबे है रुद्ध-पुकारो में,

सोचो होते, काश, तुम्हारे
ये अनाथ बेटा-बेटी,
सह सकते क्या इनकी आहे
सह सकते इनकी हेटी ?

कितने प्यार दुलारो से
माँ बापो ने पाला होगा ?
आँसू इनके देख हृदय में
फूटा-सा छाला होगा।

यह अपना बगाल क्षुधित है
जिसने पोषण भरण किया,
यह अपना बगाल व्यथित है
जिसने नित धन-धान्य दिया।

लो समेट आकुल बाँहो में
क्षुधित बधु को करुणाकर !
ओ पांचाल, बिहार, सिंधु,
गुजरात, बढाओ अगणित कर,

ओ अशेष भारत ! उद्यत हो,
तन मन धन बलिदान करो।
ओ कठोर ! तुम हरो आज
अपनी करुणा का दान करो।

आज रुद्ध है मेरी वाणी !

वह मानव कंकाल खडा है
फटे चीथडे देह लपेटे,
दुर्गंधित जर्जर टुकडे से
मानवपन की लाज समेटे,

तन क्या है ? कंकाल-मात्र !
यह शव, जो जा मरघट पर लेटे,
किन्तु, खडा विप्लव धधकाने
अचल मृत्यु को भुज भर भेंटे,

निखिल सृष्टि को भस्म करेगी
इन त्रसितो की मौन कहानी,
तुम कहते हो गीत सुनाऊँ
आज रुद्ध है मेरी वाणी !

वह किसान, सामने खडा है
जो युग-युग से पिसता आया,
भाग्य शिला पर विजित प्रताडित
अपना मस्तक घिसता आया,

अपनी आँतो पर अकाल ले
स्वय बुभुक्षित, विश्व जिलाया,
अतिम श्वासें आज गिन रहा
किसने डस ली कंचन-काया ?

सर्वनाश लाया अपने घर
महामूढ मानव अभिमानी !
तुम कहते हो गीत सुनाऊँ,
आज रुद्ध है मेरी वाणी !

हाहाकार मचा पग-पग में
धधकी महा उदर की ज्वाला,
नगो भिखमगो की टोली
जपती दो टकडो की माला,

अरमानो की नीव कँप उठी,
जब से यह जग देखा-भाला,
गुलशन उजडा, महफिल उजडी,
साकी मिटा, मिट गई हाला,

देख खडा कगाल सामने
मन की सब साधें मुरझानी !
तुम कहते हो गीत सुनाऊँ
आज रुद्ध है मेरी वाणी !

कारा के काले रौरव का
तिमिर नहीं अब तक भग पाया,
लोहे की जजीरो के
घावो में अब तक रक्त न आया;

शुष्क हड्डियो में जीवन की
अभी न मासल गति बन पाई,
खडे पुन तुम भार लादनें
आये लेने कठिन कमाई।

कुर्बानी पर कुर्बानी से
चढता कुठित असि पर पानी।
तुम कहते हो गीत सुनाऊँ
आज रुद्ध है मेरी वाणी।

धधकी महाशक्ति है मेरी
इस गति विधि पर आग लगा दूँ,
लाक्षागृह का राज बता दूँ,
सोया जनगण शेष जगा दूँ,

कूटचक्र, षड्यन्त्र, दम्भ के
साम्राज्यो के दुर्ग ढहा दूँ,
एकबार, इस पृथ्वीतल को
अभिलाषो से मुक्त बना दूँ,

इस समाज, इस जाति, देश की
है करुणा से भरी कहानी।
तुम कहते हो गीत सुनाऊँ,
आज रुद्ध है मेरी वाणी।

चिनगारियाँ निकल पडती है
मेरी वीणा के तारो से,
झुलस उँगलियाँ, रहीं ज्वाल में
लौ उठती है झकारो से,

आज गीत की टेक टेक पर
गिरती उथल-पुथल की ज्वाला,
भवन कुटी मदिर-मस्जिद सब
बनने चले राख की माला!

विधवा का सिंदूर जल रहा
प्रलय-वह्नि की अरुण निशानी!
तुम कहते हो गीत सुनाऊँ
आज रुद्ध है मेरी वाणी!

भैरवी

सुना रहा हूँ तुम्ह भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले !

जब सारी दुनिया सोती थी
तब तुमने ही उसे जगाया,
दिव्य ज्ञान के दीप जलाकर
तुमने ही तम दूर भगाया,

तुम्ही सो रहे, दुनिया जगती
यह कैसा मद है मतवाले !
सुना रहा हूँ तुम्हे भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले !

तुमने वेद उपनिषद रचकर
जग-जीवन का मर्म बताया,
ज्ञान शक्ति है, ज्ञान मुक्ति है
तुमने ही तो गान सुनाया,

अक्षर से अनभिज्ञ तुम्ही हो
पिये किस नशा के ये प्याले ?
सुना रहा हूँ तुम्हे भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले !

भूल गए मथुरा वृन्दावन,
भूल गए क्या दिल्ली झाँसी ?
भूल गए उज्जैन अवन्ती,
भूले सभी अयोध्या काशी ?

जननी की ज़ंजीरे बजती,
जगा रहे कड़ियो के छाले,
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले !

गगा यमुना के कूलो पर
सप्त सौध थे खडे तुम्हारे,
सिंहासन था, स्वर्ण-छत्र था,
कौन ले गया हर वे सारे ?

टूटी झोपडियो में अब तो
जीने के पड रहे कसाले !
सुना रहा हूँ तुम्हे भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले !

भूल गये क्या राम-राज्य वह
जहाँ सभी को सुख था अपना,
वे धन-धान्य-पूर्ण गृह अपने
आज बना भोजन भी सपना,

कहाँ खो गये वे दिन अपने
किसने तोडे घर के ताले ?
सुना रहा हूँ तुम्हे भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले !

भूल गये वृन्दावन मथुरा
भूल गये क्या दिल्ली झाँसी ?
भूल गये उज्जैन अवन्ती
भूले सभी अयोध्या काशी ?

यह विस्मृति की मदिरा तुमने
कब पी ली मेरे मदवाले !
सुना रहा हूँ तुम्हे भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले !

भूल गये क्या कुरुक्षेत्र वह
जहाँ कृष्ण की गूँजी गीता,
जहाँ न्याय के लिए अचल हो
पाडु-पुत्र ने रण को जीता;

फिर कैसे तुम भीरु बने हो
तुमने रण-प्रण के व्रण पाले!
सुना रहा हूँ तुम्हे भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले!

याद करो अपने गौरव को
थे तुम कौन, कौन हो अब तुम।
राजा से बन गये भिखारी,
फिर भी, मन में तुम्हे नही ग़म?

पहचानो फिर से अपने को
मेरे भूखो मरनेवाले!
सुना रहा हूँ तुम्हे भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले!

जागो हे पाचालनिवासी!
जागो हे गुर्जर मद्रासी!
जागो हिन्दू मुगल मरहठे
जागो मेरे भारतवासी!

जननी की जजीरें बजती
जगा रहे कड़ियो के छाले!
सुना रहा हूँ तुम्हे भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले!

चित्रकार श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर

राग में जब मत्त झूलो
वन्दिनी माँ को न भूलो,

पृष्ठ १

ग्राम का आमंत्रण

वर्धा में बापू का निवास
सब कहते जिसको महिलाश्रम,
क्या देख रहे ये उन्मन हो
नभ में घन के घिरने का क्रम ?

घन विकल घूमते अंबर में
कैसे बरसावें वे जीवन ?
बापू हैं आश्रम में आकुल
कैसे लावें वे नवजीवन ?

बिजली है रह रह कौंध रही
घनमाला के अंतस्तल में,
संकल्प विकल्प इधर उठते
है बापू के हृदयस्थल में—

'ये नगर विभव वैभव बंधन से
चाह रहे है कसना मन,
मै चला तोडने ये कडियाँ,
आ रहा ग्राम का आमंत्रण।'

आ रही ग्राम की सरल वायु
कहती है आओ मनमोहन!
तुम बहुत रह चुके नगरो में
देखो मेरे भी गृह - आँगन!

आओ तुम पुरई - पालो में
आओ छप्पर खपरैलो में,
आओ फूसो की कुटियो में
कुम्हडे कद्दू की बेलो में।

आओ कच्ची दीवारो से
निर्मित घर की चौपालो में,
रहते है दीन किसान जहाँ
जामुन महुआ के थालो में।

आओ नवजीवन के प्रभात!
आओ नवजीवन की किरणें,
इन ग्रामो का भी भाग्य जगे
ये भी श्रीचरणो को वरणें।

ये ग्राम उगाते अन्न धान
वे नगर प्रेम से चखते हैं,
ये ग्राम उगाते साग पात
वे नगर लूटते रहते हैं।

दधि दूध और घृत की नदियाँ
ये नगर पिये ही जाते हैं।
भूखे रह कर, नंगे रह कर
ये ग्राम जिये ही जाते हैं!

कुछ मूल, सूद दर सूद लगा
गृह छीन लिए ही जाते हैं,
चिकनी चुपडी बातें कहकर
रे घाव सिये ही जाते हैं।

निशिदिन है हाहाकार मचा
कैसा यह अत्याचार मचा?
निर्धन को धनी खा रहे हैं
यह बर्बर नर-संहार मचा!

वैभव विलास के उच्च नगर
है तुम्हे उधर ही खींच रहे,
फैला कर इन्द्रजाल अपना
अन्तर के लोचन मींच रहे!

ओ आत्मसाधना के यात्री!
तेरा पावन आवास यहाँ,
निर्मल नभ, धरणी हरित जहाँ
लाती है वायु सुवास जहाँ।

भोले भाले सच्चे किसान
तुमको न कभी भटकावेंगे,
अपने खेतो खलिहानो का
वे तुमको वृत्त सुनावेगें।

कैसे कटती है रात, दिवस
कैसे तुमको समझावेंगे,
हे ग्रामदेवता! ग्राम तुम्हे
पाकर कृतार्थ हो जावेंगे।

है जीर्ण शीर्ण ये ग्राम
जहाँ युग-युग से छाया अधकार,
ये रौरव भव में बसे हुए
सुन लो तुम इनकी भी गुहार।

घन चले फूट कर बरस पडे
भरने अमृत से भव सारा,
बापू भी आश्रम से बाहर
बह चली किधर गगा-धारा?

घन लगे बरसने रिमिक झिमिक
कुछ हुआ और भी अधकार,
बह चला प्रभजन भी सन सन
बिजली चमकी ले द्युति अपार।

बापू कटि-बद्ध चले आश्रम
को त्याग, व्यग्र आश्रमवासी!
इस समय कहाँ इस असमय में
जाते है अपने अधिवासी?

आश्रमवासी चिंतित व्याकुल
कहते जाने का यह न समय,
'विश्राम करो बापू ! चलना
प्रात जब होगा अरुणोदय !'

दुर्दिन है, सुदिन नही है यह
हम सभी चलेंगे साथ संग,
एकाकी जायँ न आप कही
तम सघन, गगन का श्याम रंग।

पर सुनते कब किसकी बापू
वे सुनते आत्मा की पुकार,
वे सुनते निज प्रभु की पुकार
चल पडते खुलता जिधर द्वार !

रह गई विनय अनुनय करती
पर, कहाँ किसी की वे मानें ?
वे चले आज एकाकी ही
उन्नत ललाट, सीना ताने !

कर में लेकर अपनी लकुटी
तन में मोटा उजला कंबल,
दृढ दृष्टि सुदृढ़ गति प्रगति पुष्ट,
देने को ग्रामो को सबल !

वे चले स्वयं घन गर्जन से,
विद्युत के अविचल वर्जन से,
प्रलयंकर भीम प्रभंजन से,
जलनिधि के भीषण तर्जन से !

रह गए देखते खड़े सभी
चित्रित से, जड़ित, चकित, विस्मित !
कितने दुर्जय निर्भय हैं ये
यह भी विभूति प्रभु की विकसित !

बापू आश्रम से दूर दूर
थे बहुत दूर अपनी धुन में,
जा रहे चले गभीर शान्त
आत्मा के मधुमय गुंजन में।

बह रहा प्रभंजन था रह रह,
बापू बढ़ते झोंके सह सह,
बाधाओं की विपदाओं की
प्राचीरें जाती थीं ढह ढह !

बिजली बन करके कंठहार
बापू के उर में सजती थी,
घन थे प्रसन्न, अमृत जल था,
वंशी स्वागत की बजती थी।

ग्रामों की उत्सुक आँख लगी थी
अपने नव अभ्यागत पर,
किसको सौभाग्य प्रदान करें
सब उत्कंठित थे स्वागत पर !

पथ की लतिकाएँ फूल रहीं
फूलों के घट थीं साज रहीं,
मधु भर करके मंगल घट में
प्रतिहारी बनी विराज रहीं।

मन में प्रसन्न खगमृग अतीव
वरदान उन्होंने पाया था,
आज ही अहिंसा का स्वामी
गृह तज कर बन में आया था।

थे मुदित मयूर मयूरी भी
हिलमिल कर गरबा नाच रहे,
सुरधनु-से पख खोल अपने
निज भाग्य-पृष्ट थे बाँच रहे।

कर्कश कठोर थी भूमि बनी
करुणा जल पा करके कोमल,
बापू प्रसन्न उन्मुक्त सबल
थे चले जा रहे उश्रृंखल।

झंझा की इधर झकोरें थी
हिमगिरि पर उधर महान चला,
वर्षा की बूँदें थीं सहस्र
पर उधर भीम तूफान चला।

ग्रामो का नव उत्थान चला,
यह भव का नव निर्माण चला!
पद दलितो का अरमान चला,
आत्माहुति का बलिदान चला।

थे चरण-चिन्ह बनते पथ में
दृढ पुष्ट चरण, मिट्टी धँसती,
इतिहास लिख रही थी दुनिया
थी आज नई बस्ती बसती!

कितनी ही आँखें बिछ पथ पर
थी पदरज ले धरती शिर पर,
वनबालायें वन घूम घूम
गाती थीं गायन मादक स्वर!

बापू चल आये दूर जहाँ
निर्जन वन था एकात प्रात,
था गाँव एक सेगाँव जहाँ
दो चार धाम थे खडे शात!

जैसे ग्रामो के प्रतिनिधि बन
वे हो स्वागत में सावधान!
सौभाग्य समझ अपने गृह का
ले गये उन्हे गृह में किसान!

बीती वह रात वही, उन
कुटियो में जब पुण्य प्रभात हुआ,
देखा दुनिया ने वही एक
था मधुर ग्राम नवजात हुआ।

सेवाग्राम

वर्धा से दूर सुदूर बसा है
वहीं मनोहर मधुर ग्राम,
जिसका है सेवाग्राम नाम
है जिसमें लघु लघु बने धाम।

है यही देश का हृदय तीर्थ
है यही देश का हृदय प्राण,
हैं उठते यहीं विचार दिव्य
जो करते जनगण राष्ट्र-त्राण।

नवयुग के नये विधाता की
यह है अजीब छोटी बस्ती,
जिसमें नवीन जीवन का क्रम
जिसमें नवीन दुनिया हँसती।

यह तपोभूमि, यह कर्मभूमि
यह धर्मभूमि है तेजमयी,
जिसमें सुलझाई जाती हैं
सब जटिल ग्रन्थियाँ नई-नई।

यह है हिमाद्रि उत्तुंग धवल
जिससे बहकर गगा धारा,
है हरा भरा उर्वर करती
भारत का गृह आँगन सारा।

है यही सौर्य मडल जिसके
चारो ही ओर प्रकाशपुज,
करते रहते है परिक्रमा
साजते दिव्य आरती - कुज।

लेकर प्रकाश की रश्मि, कर्म की
गतिविधि, रति मति का सबल,
अगणित नक्षत्र उदित होते
सुदर स्वदेश नभ में निर्मल।

यह शक्ति-केन्द्र, प्रेरणा-केन्द्र,
अर्चना-केन्द्र, साधना-केन्द्र,
वदन अभिनदन करते है
जिसमें आकर नर औ' नरेन्द्र।

है यहीं मूर्ति वह तपोमयी
जो देती रह-रह नवल स्फूर्ति,
इस देश अभागे की झोली
भरती है सबल नवल पूर्ति।

वह मूर्ति जिसे कहते बापू
गान्धी, मनमोहन, महात्मा,
रहती है यही, यही सोती
जगती प्रणम्य वह युगात्मा।

भ्रमण

संध्या की स्वर्णिम किरणें जब
ढल छा जाती है तरुओं पर,
कुछ कलरव करते सा उडते
खगकुल तृण चुन चुन अपने घर।

गोधूलि बनी संध्या - समीर
पथ में उडती है कभी कभी,
लौटते कृषक खलिहानो से
कंधे धर हल पुर वस्त्र सभी।

तब चलती है टोली पथ में
कुछ इने गिने मस्तानो की,
घूमने साथ में बापू के
आजादी के दीवानो की।

'लो चलो घूमनेवाले सब'
बापू कहते आकर बाहर,
सुनकर वाणी आश्रमवासी
आते कितने ही नारी नर।

कुछ नन्हे नन्हे बच्चे भी
आकर कहते है मचल मचल,
'बापू जी साथ चलेंगे हम
आगे बढ बढकर उछल-उछल।

मातायें कहती चल न सकेगा
खेल अभी बेटा! घर में,
बापू कुछ कदम चला देते
शिशु का कर लेकर निज कर में।

आँसू आते है नहीं कभी,
है हँसी खेलती अधरो पर,
वह जादू बापू कर देते
बच्चो से बातें कर मनहर।

यो ही औरो को भी तो वे
चलना भव-पथ में सिखलाते,
सब चलते है दो-चार कदम
फिर शिशु से पीछे रह जाते।

शिशु सोचा करता खडा खड़ा
वह थोडा और बडा होता,
तो साथ-साथ चलता बापू के
यो न कभी पिछडा होता।

चलते अनेक है साथ-साथ
कुछ ही तो ही है चल पाते,
कुछ पहले ही, कुछ बीच,
अत में कुछ, कुछ पीछे रह जाते।

यह भ्रमण खोल सा देता है
उनके जीवन का गहन मर्म,
जो साथ चल सकें बापू के
दो चार नित्य जो निरत-कर्म ।

कितनी गति इनकी तीव्र
चले तब चले, नही रोके रुकते,
कुछ भी आये सामने शीत
हिम, विघ्न, कहाँ पर ये झुकते ?

इनके चरणो में ही चल चल
इस गिरे राष्ट्र को बढना है,
जिस ओर चले जनगणनायक
घाटी पर्वत पर चढ़ना है !

बापू न ! चलो तुम इस गति से
जिससे न सभी जन बढ़ पायें,
अग्रणी ! अकेले पहुँचो तुम
सब जनगण यहीं पिछड़ जायें ।

जब चलो, चलो इस गति मति से
हम भी चरणो में चल पायें,
इस तिमिरावृत भारत नभ में,
नवजीवन का प्रभात लायें ।

है जिनका निश्चित ध्येय
स्पष्ट है मार्ग, और साधन निर्मल,
उनके चरणो के अनुगामी
होगे यात्रा में क्यो न सफल ?

बापू

मन में नूतन बल सँवारता
जीवन के संशय भय हरता,
वृद्ध वीर बापू वह आया
कोटि कोटि चरणो को धरता,

धरणी-मग होता है डगमग
जब चलता यह धीर तपस्वी,
गगन मगन होकर गाता है
गाता जो भी राग मनस्वी;

पग पर पग धर-धर चलते है
कोटि कोटि योधा सेनानी,
विनत माथ, उन्नत मस्तक ले
कर नि शस्त्र, आत्म-अभिमानी !

युग-युग का घन तम फटता है
नव प्रकाश प्राणो में भरता,
वृद्ध वीर बापू वह आया
कोटि कोटि चरणो को धरता !

निद्रित भारत जगा आज है,
यह किसका पावन प्रभाव है?
किसके करुणाचल के नीचे
निर्भयता का बढा भाव है?

नवचेतन की श्वास ले रहे
हम भी जाग उठे है जग में,
उठा लगाया हृदय-कठ से
किसने पददलितो को मग में?

व्यथित राष्ट्र पर आँचल करता
जीवन के नव-रस-कन ढरता,
वृद्ध वीर बापू वह आया
कोटि कोटि चरणो को धरता!

यह किसके तप का प्रकाश है?
नवजीवन जन जन में छाया,
सत्य जगा, करुणा उठ बैठी
सिमटी मायावी की माया,

'वैभव' से 'विराग' उठ बोला--
'चलो बढो पावन चरणो में,
मानव-जीवन सफल बना लो
चढ पूजा के उपकरणो में।

जननी की कडियाँ तडकाता
स्वतत्रता के नव स्वर भरता,
वृद्ध वीर बापू वह आया
कोटि कोटि चरणो को धरता!

कविता रानी से

कल्पनामयी ओ कल्यानी !
ओ मेरे भावो की रानी !
क्यो भिगो रही कोमल कपोल
बहता है आँखो से पानी !

कैसा विषाद ? कैसा रे दुख ?
सब समय नही है अधकार !
आती है काली रजनी तो
दिन का भी है उज्ज्वल प्रसार !

अधरो पर अपने हास धरो,
बाधाओ का उपहास धरो,
जीवन का दिव्य विकास धरो,
तुम यों न निराशा श्वास भरो !

विश्वास अमर, साधना सफल
सत्कर्मों से शृगार करो,
धुँधली तस्वीरें खीच खीच
मत जीवन का सहार करो।

वेदों उपनिषदों की धात्री !
चिर जीवन चिर आनद यहाँ,
मगल चितन, मगल सुकर्म
है जीवन में अवसाद कहाँ ?

हे आर्यों की गौरव विभूति !
तुम जीवन में मत अमा बनो
कल्याण-अमृत की वर्षा हो
तुम आशा की पूर्णिमा बनो !

तुम जगद्धात्रि ! जग कल्याणी !
तुम महाशक्ति ! सोचो क्या हो,
कविते ! केवल तुम नहीं अश्रु
जीवन में जय की आत्मा हो !

तुम कर्मगान गाओ जननी !
तुम धर्मगान गाओ धन्ये !
तुम राष्ट्र धर्म की दीक्षा दो,
तुम करो राष्ट्र-रक्षण पुण्ये !

गाओ आशा के दिव्य गान,
गाओ, गाओ भैरवी-तान
युग युग का घन तम हो विलीन
फूटे युग में नूतन विहान !

कल्मष छूटे अतरतम का
गाओ पावन संगीत आज,
जागे जग में मगल-प्रभात
गाओ वह मगल-गीत आज !

उमंग

उठ उठ री मानस की उमग !
भर जीवन मे नव रक्त-रग ।

उठ सागर सी गहराई सी,
पर्वत की अमित उँचाई सी,
नभ की विशाल परछाही सी,

लय हो अग जग के रग ढग ।
उठ उठ री मानस की तरग ।

छा जीवन मे बन एक आग,
अनुराग रहे या हो विराग,
चमके दोनो मे आत्मत्याग,

जल जल चमकूँ मै वह्नि-रग ।
उठ उठ री मानम की उमग ।

प्रण में मरने की जगा साख,
रण में मर कर मै बनूँ राख,
उठ पड़ें राख से लाख लाख,

शर से भर कर खाली निषग ।
उठ उठ री मानस की उमग ।

प्रण में मरने की जगा साख,
रण में मरकर मैं बनूँ राख;
उठ पड़ें राख से लाख लाख
भर कर शर से खाली निषंग!

कवि से

ओ नवयुग के कवि जाग जाग !

प्राचीन पुरातन कलाकार
वैभव-व्यसन में हुए लीन,
महलो को तज झोपड़ियों में
कब उनके मन की बजी बीन ?

यह गुरु कलंक का पंक मेट
बनकर शोषित के अभयगान,
नंगा भूखा प्यासा समाज
देखता राह तेरी, महान !

नवजीवन के रवि ! जाग जाग !
ओ नवयुग के कवि ! जाग जाग !

है एक ओर, पीडित जनता,
है एक ओर, साम्राज्यवाद,
गा रे, जनगण के शक्ति-गीत
जिससे टूटे युग का प्रमाद,

पिस गई हमारी रीढ आह !
ढोया है अब तक राज्य-भार
बल का सबल दे दुर्बल को
वह उठे आज निज को निहार !

नव चेतन की छवि ! जाग जाग !
ओ नवयुग के कवि ! जाग जाग !

गा ओ मेरे युग के गायक
वह महाक्रान्ति का अभय गान,
झुलसें जिसकी ज्वालाओ में
अगणित अन्यायो के वितान !

रूढियाँ, अध-विश्वास घोर
जड जीवन का रे तिमिर चीर !
आलोक सत्य का फैला दे
बह चले मुक्त जीवन-समीर !

ओ नव बलि की हवि ! जाग जाग !
ओ नवयुग के कवि ! जाग जाग !

कवि और सम्राट्

अकबर और तुलसीदास
दोनो ही प्रकट हुए एक समय, एक देश,
कहता है इतिहास,

'अकबर महान'
गूँजता है आज भी कीर्ति-गान,

वैभव प्रासाद बडे
जो थे सब हुए खडे
पृथ्वी में आज गडे !
अकबर का नाम ही है शेष सुन रहे कान !

किन्तु कवि तुलसीदास !
धन्य है तुम्हारा यह
रामचरित का प्रयास,
भवन यह तुम्हारा अचल
सदन यह तुम्हारा विमल
आज भी है अडिग खड़ा,
उन्मद उत्साह बड़ा,
पाता है वही जो जाता है कभी यहाँ !
एक हुए सम्राट्
जिनका विभव विराट्
एक कवि,—रामदास
कौड़ी भी नहीं पास,
किन्तु, आज धीर महाकालों की
तालों को,
गूँजती है नृपति की नहीं,
कवि की ही वाणी गँभीर !
अकबर महान जैसे मृत
तुलसीदास अ-मृत !

अखंड भारत

तुम कहते---मैं लिखूं तुम्हारे
लिए नई कोई कविता,
मैं कहता---क्या लिखूँ ? अस्त है
अपने गौरव का सविता !

कलम बंद, मुँह बंद, लिखूं फिर
क्या मैं अब तुमको साथी !
आज चले वे संग छोड़, पथ मोड़,
कि जिनसे आशा थी।

राजा की मति रुक हुई, तब
औरों की हो क्या गणना ?
ये अखंड-भारत को खंडित
करने चले समझ बढ़ना।

क्या बतलाऊँ—बड़े बुजुर्गों की
तुमको बहकी बातें ?
जो दिन समझ ला रहे हैं,
अपने ही आँगन में रातें !

'बुद्धिभेद जनयेत् न कदाचित्'
क्या इनसे कहना होगा ?
'पंक्ति भेद है पाप' अलग हो !
याकि अलग रहना होगा।

क्या ग़ैरों से लोहा लेंगे,
जब घर में ही फूट हुई ?
जो भी संघ-शक्ति थी अपनी
पथ में उसकी लूट हुई !

आज बहाने चले भगीरथ
उल्टी गंगा की सरिता !
तुम कहते—मैं लिखूँ तुम्हारे
लिए नई कोई कविता !!

उद्‌बोधन

मेरे हिन्दू औ' मुसलमान!
रे अपने को पहचान जान!

हम लड जाते है आपस में
मंदिर मसजिद हैं लड जाती,
हम गड जाते है धरती में
मंदिर मसजिद है गड जाती।

मंदिर मसजिद से ऊपर हम
रे अपने को पहचान जान!

हम यवन बताते है तुमको
तब यवन बताते है पुराण,
तुम काफिर कहते हो हमको
तब काफिर कहती है कुरान।

गीता कुरान से ऊपर हम
रे अपने को पहचान जान!

हम चले मिटाने जब तुमको
बेचारी दाढ़ी कट जाती,
तुम चले मिटाने जब हमको
बेचारी चोटी छट जाती।

दाढ़ी चोटी से ऊपर हम
रे अपने को पहचान जान!

हम शत्रु समझते हैं तुमको
इतिहास शत्रु बतलाता है,
हम मित्र समझते हैं तुमको
इतिहास मित्र बतलाता है!

इतिहासों से ऊपर हैं हम
रे अपने को पहचान जान।

विक्रमादित्य

वह था जीवन का स्वर्णकाल,
जब प्रात प्रथम था मुसकाया,

क्षिप्रा की लहरो में केसर कुकुम का जल था लहराया !

आलोक अलौकिक छाया था,
वरदान धरा ने पाया था,

विक्रमादित्य के व्याज स्वय आदित्य तिमिर में था आया !

वैभव विभूति के पद्म खिले,
सुख के सौरभ से सद्म खिले,

बहता मलयज सगीत लिए आनन्द चतुर्दिक था छाया !

कवि कालिदास की वरवाणी,
गाती थी गौरव कल्याणी,

नव मेघदूत के छंदो ने मकरद मेघ था बरसाया !

नवरत्नो की वह कीर्ति कथा,
बनती प्राणो में मधुर व्यथा,

वह दिन कितना सुंदर होगा, जब था इतना वैभव छाया !

उज्जैन अवंती का वैभव,
दिशि-दिशि करता फिरता कलरव,

उस दिन, दरिद्रता धनी बनी, सबने ही था सब कुछ पाया !

इतिहास न वह भूला मेरा,
डाला विदेशियो ने घेरा,

यह विक्रम ही का विक्रम था, पल मे पदतल अरिदल आया !

उस विजय दिवस की स्मृति स्वरूप
प्रचलित विक्रम सवत् अनूप,

ये दिवस, मास, वे पुण्य पृष्ठ, जब जय-ध्वज हमने फहराया !

उस दिन की सुधि से है निहाल,
हिमगिरि का उन्नत उच्च भाल,

गगा-यमुना की लहरो में, अमृत-जल करता लहराया !

अशोक की हिंसा से विरक्ति

क्यो दहक रहा उर बना अनल ?

यह भीषण नर-सहार हुआ,
प्रतिपल में हाहाकार हुआ,
मरघट सा सब ससार हुआ,
पर, नहीं शान्ति सचार हुआ,

क्यो अमृत आज बन रहा गरल ?
क्यो दहक रहा उर बना अनल ?

सिहासन पर सिहासन नत,
मानव पर मानव है हत-मृत !
मुकुटो पर मुकुट मिले श्रीहत,
राज्यो पर राज्य हुए कर-गत !

फिर भी, मन क्यो लगता निर्बल ?
क्यो दहक रहा उर बना अनल ?

खड्गें बन शोणित की प्यासी !
बन महाकाल की रसना-सी,
दौडीं बन वीरो की दासी ?
पी गई रक्त, जल-तृष्णा-सी,

अब तक न हुआ यह मन शीतल ?
क्यो दहक रहा उर बना अनल ?

विजयी कलिंग है पडा ध्वस्त !
दभी का बल भी हुआ त्रस्त !
बैरी का दिनकर हुआ अस्त,
किस उलझन मे है विश्व व्यस्त ?

क्यो थका हुआ है सब भुजबल ?
क्यो दहक रहा उर बना अनल ?

कब तक के लिए राज्य का मद ?
कब तक के लिए राज्य का पद ?
दो दिन मानव हो ले उन्मद,
शोणित के विपुल बहा ले नद !

पर, व्यर्थ विजय-उन्माद सकल !
क्यो दहक रहा उर बना अनल ?

दो दिन ही के हित यह महान !
वैभव सुख सपति का विधान,
मानव है कितना विगत-ज्ञान ?
जो परम सत्य भूला निदान !

फिर, दु ख क्यो न हो उसे सरल ?
क्यो दहक रहा उर बना अनल !

मिट रही आज है सभी भ्रान्ति,
मिलती है मन को आज शान्ति,
करुणा की कैसी कनक-कान्ति,
हो रही तिरोहित चिर अशान्ति,

निर्बल पर क्रूर बने न सबल !
करुणा दे अग-जग को मगल !

अहिंसा-अवतरण

तभी मैं लेती हूँ अवतार!

महा-क्रान्ति हुंकार लिए जब
करती नर - संहार,
रक्त - धार में उतराने
लगता समस्त संसार,

सहम जाते हैं बुद्धि विचार,
तभी मैं लेती हूँ अवतार!

कर्मकाण्ड की लिए दुहाई
नर करते नरमेध,
किन्हीं दीन प्राणों की
आहें जातीं अंबर भेद,

बहाते तारक आँसू धार,
तभी मैं लेती हूँ अवतार!

जब कलिंग जय की लिप्सा में
पीते सुरा अशोक,
विजय एक दिन बन जाती है
अंतरतम का शोक,

उमडता उर में हाहाकार
तभी मैं लेती हूँ अवतार!

मैं अपने शीतल अंचल में
लेकर जलता लोक,
चंदन का अनुलेपन करती
खिलते सुख के कोक,

न आती फिर दुख भरी पुकार
कि जब मैं लेती हूँ अवतार!

कोटि प्रणाम !

कोटि कोटि नगो भिखमगो के जो साथ,
खड़े हुए है कधा जोडे, उन्नत माथ,
शोषित जन के पीडित जन के कर को थाम,
बढे जा रहे उधर, जिधर है मुक्ति प्रकाम;

ज्ञात नहीं है
जिनके नाम !
उन्हे प्रणाम !
सतत प्रणाम !

भेद गया है दीन-अश्रु से जिनका मर्म,
मुहताजो के साथ न जिनको आती शर्म,
किसी देश में किसी वेश में करते कर्म,
मानवता का सस्थापन ही है जिनका धर्म !

यौवन में ही लिया जिन्होने है वैराग,
मातृभूमि का जगा जिन्हे ऐसा अनुराग !
नगर नगर की ग्राम ग्राम की छानी धूल,
समझे जिससे सोई जनता अपनी भूल,

उन्हे प्रणाम
कोटि प्रणाम !

कोटि कोटि नगो भिखमगो के जो साथ,
खडे हुए है कधा जोडे, उन्नत माथ—
शोषित जन के पीडित जन के कर को थाम,
बढे जा रहे उधर, जिधर है मुक्ति प्रकाम,

जिनके गीतो के पढने से मिलती शान्ति,
जिनकी तानो के सुनने से झिलती भ्रान्ति,
छा जाती मुखमडल पर यौवन की क्रान्ति,
जिनकी टेको पर टिकने से टिकती क्रान्ति !

मरण मधुर बन जाता है जैसे वरदान,
अधरो पर खिल जाती है मादक मुसकान,
नही देख सकते जग में अन्याय वितान,
प्राण उच्छ्वसित होते, होने को बलिदान !

जो घावो पर मरहम का
कर देते काम !
उन्हे प्रणाम
सतत प्रणाम

कोटि कोटि नगो भिखमगो के जो साथ,
खडे हुए है कधा जोडे, उन्नत माथ—
शोषित जन के पीडित जन के कर को थाम,
बढे जा रहे उधर, जिधर है मुक्ति प्रकाम,

उन्हे प्रणाम !
सतत प्रणाम !
कोटि प्रणाम !

उन्हे जिन्हे है नही जगत में अपना काम
राजा से बन गये भिखारी तज आराम,
दर दर भीख माँगते सहते वर्षा घाम,
दो सूखी मधुकरियाँ दे देतीं विश्राम !

जिनकी आत्मा सदा सत्य का करती शोध,
जिनको है अपनी गौरव गरिमा का बोध,
जिन्हे दुखी पर दया, क्रूर पर आता क्रोध,
अत्याचारो का अभीष्ट जिनको प्रतिशोध !

प्रणत प्रणाम !
सतत प्रणाम !

कोटि कोटि नगो भिखमगो के जो साथ
खडे हुए है कंधा जोडे, उन्नत माथ।
शोषित जन के पीडित जन के कर को थाम
बढे जा रहे उधर, जिधर ही मुक्ति प्रकाम।

जजीरो में कसे हुए सिकचो के पार,
जन्म-भूमि जननी की करते जय जय कार !
सही कठिन हथकडियो की बेतो की मार,
आजादी की कभी न छोडी टेक पुकार;

स्वार्थ, लोभ, यश, कभी सका है जिन्हें न जीत,
जो अपनी धुन के मतवाले मम के मीत;

ढाने को साम्राज्यवाद की दृढ़ दीवार,
बार बार बलिदान चढ प्राणो को वार;

बद सीकचो में जो है
अपने सरनाम
उन्हे प्रणाम!
सतत प्रणाम!

कोटि कोटि नगो भिखमंगो के जो साथ,
खडे हुए हैं कधा जोडे, उन्नत माथ—

शोषित जन के—
बढ़े जा रहे—

उन्हीं कर्मठो, ध्रुवधीरों को है प्रतियाम
उन्हें प्रणाम!
प्रणत प्रणाम!
सतत प्रणाम!
कोटि प्रणाम!

जो फाँसी के तख्तो पर जाते है झूम,
जो हँसते हँसते शूली को लेते चूम
दीवारो में चुन जाते है जो मासूम
टेक न तजते पी जाते है विष का घूम!

उस आगत को जो कि अनागत दिव्य भविष्य,
जिसकी पावन ज्वाला में सब पाप हविष्य!
सब स्वतत्र, सब सुखी जहाँ पर, सुख विश्राम!
नव युग के उस नव प्रभात को कोटि प्रणाम!

पथ-गीत

धधक रही है यज्ञकुंड में
आत्माहुति की शीतल ज्वाला,
होता ! पड़े न मंद हुताशन
नव नव अभिनव आहुतियाँ ला।

चल यौवन का दान लिए चल
जीवन का वरदान लिए चल,
अधरों पर मुसकान लिए चल
प्राणो के बलिदान लिए चल।

शूरो का सम्मान लिए चल
वीरों का अभिमान लिए चल,
जय जननी के गान लिए चल
आहत के अरमान लिए चल।

प्राणो में युग युग की ज्वाला
श्वासो में युग युग की आँधी,
शोणित में युग युग का घृत ले
चल रे ! हव्य माँगता गाँधी।

आज़ादी के फूलों पर

सिहासन पर नही वीर !
बलिवेदी पर मुसकाते चल !
ओ वीरो के नये पेशवा !
जीवन-ज्योति' जगाते चल !

रक्तपात, विप्लव अशान्ति
औ' कायरता बरकाते चल।
जननी की लोहे की कडियाँ
रह रहकर सरकाते चल !

पग-पग में हो सिह-गर्जना
दिशि डोलें, झकार उठे,
जागें सोयें जलियाँवाले
यो तेरी हुकार उठे !

है तेरा पाचाल प्रबल
बगाल विमल विक्रमवाला,
महाराष्ट्र सौराष्ट्र, हिन्द,
अपने प्रण पर मिटनेवाला,

है बिहार गुणगौरववाला
उत्कल शक्ति-सघवाला,
बलिवाला गुजरात, सुदृढ
मद्रास, भक्ति वैभववाला,

फिर क्यो दुर्बल भुजा हमारी
कैसी कसीं लोह-लड़ियाँ ?
अँगड़ाई भर ले स्वदेश
टूटें पल में कडियाँ-कडियाँ !

आयें हम नगे भिखमगे
सब भूखो मरनेवाले।
अपनी हड्डी-पसली खोले,
रक्त-दान करने वाले

खुरपी और कुदालीवाले,
फड़ुआ औ' फरसेवाले।
महाकाल से रात-दिवस
दो टुकड़ो पर लड़नेवाले !

फूँक शख, बाजे रणभेरी,
जननी की जय जय बोले।
चले करोडो की सेना
डगमग डगमग धरणी डोले !

चढ़ जायें चालिस करोड फिर
बलि के मधुमय झूलो पर,
मेरी माँ भी चले बिहँसती
आजादी के फूलो पर।

ओ प्रबल तूफ़ान

अरुण आँखों में रहे, घिरते
प्रलय के मेघ,
भाल में बिजली चमकती हो
सघन सम वेग,

अभय मुद्रा में उठा हो हाथ
बन वरदान,
मस्तकों पर पथ बना, चल
ओ प्रबल तूफान!

बढ़ उधर, हुंकार भर, हो
जिधर गर्जन घोर,
छीन ले झंडा कि जिनका
घट गया हो जोर।

आज मानवता तुझे ही
देखते हैं वीर!
आँख में आँसू न हों, वह
खींच दे तस्वीर।

तैयार रहो

मेरे वीरो ! तैयार रहो,
रणभेरी बजनेवाली है,
मेरे तीरो ! तैयार रहो,
फिर टोली सजनेवाली है !

शाबाश ! शूरवीरो मेरे,
शाबाश ! समरधीरो मेरे !
शाबाश ! जननि के चरणों में
लुटनेवाले हीरो मेरे !

मंजिल थोड़ी ही शेष रही,
साहस ले उर में चले चलो,
मुसकानों से बलिदानों से,
बाधा-विघ्नों को दले चलो।

शूरो वीरो के शोणित का
अभिमान लिये तैयार रहो,
आहत जननी के अतस के
अरमान लिये तैयार रहो।

तैयार रहो मेरे वीरो,
फिर टोली सजनेवाली है।
तैयार रहो मेरे शूरो,
रणभेरी बजनेवाली है!

इस बार, बढो समरागण में,
लेकर मर मिटने की ज्वाला,
सागर-तट से आ स्वतन्त्रता,
पहना दे तुमको जयमाला!

राष्ट्र-सेनानी

खिल उठी है राष्ट्र की तरुणाइयाँ !
आज प्राची में फटी अरुणाइयाँ !
यह नहीं भूकम्प है या है प्रलय,
लीं जवानी ने फकत अँगड़ाइयाँ !

ये चले क्या ? क्रान्ति के नारे चले,
और नभ पर खिसकते तारे चले !
है चिता की भस्म मस्तक पर लगी,
ये धधकते लाल अंगारे चले !

राष्ट्र-ध्वजा

हमारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।
तुम्हारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।

बम बरसे या बरसे गोली,
बढ़े देशभक्तों की टोली,
मस्तक पर हो रण की रोली,

डगमग डगमग धरणी डोले,
जय जय ध्वनि घहरे।

हमारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।
तुम्हारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।

राष्ट्र सैन्य का वीर सिपाही,
बन कर अपने युग का राही,
दूर करेगा सब गुमराही,

स्वतन्त्रता हो लक्ष्य हमारा
शत्रु देख हहरे।

हमारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।
तुम्हारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।

बहुत सहे हैं हमने शासन,
कमर तोड़ सिरपर सिंहासन,
आज प्रलय हो हो, परिवर्तन,

शोषित पीडित आज जगे हैं,
जय - निशान लहरे !

हमारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।
तुम्हारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।

उठे राष्ट्र का ऊँचा नारा,
प्यारा हिन्दुस्तान हमारा,
कौन हमें कर सकता न्यारा ?

छू सकते साम्राज्य न इसको,
भीरु देख भहरे।

हमारी राष्ट्र-ध्वजा फहरे।
तुम्हारी राष्ट्र-ध्वजा फहरे।

उडे देश में राष्ट्र - पताका,
रोके बढ़ बैरी का नाका,
चले राष्ट्र-भक्तो का साका,

अन्यायो का सर्वनाश हो,
आज न्याय ठहरे !

हमारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।
तुम्हारी राष्ट्र - ध्वजा फहरे।

राष्ट्रपति सुभाषचंद्र

नवयुवकों में नव उमंग
की नई लहर लहराते चल!
देशप्रेम की पावन गंगा
पग पग पर छहराते चल,

राष्ट्र-ध्वजा नीलांबर का
अंचल छूते फहराते चल!
स्वतंत्रता के मधुर युद्ध के
घन घमंड घहराते चल,

चमको राष्ट्र-गगन - मंडल में,
चूमे चरण सिंधु तेरे,
मेरे वीर सुभाषचंद्र!
सौभाग्य-चंद्र बन जा मेरे!

पूजा गीत

१

अतरतम में ज्योति भरो हे।

जहाँ जहाँ नत मस्तक पाओ,
वहाँ वहाँ युग चरण बढाओ,

मेरे मगलमय। दुर्बल पर
निज कर-पल्लव सबल धरो हे।

अतरतम में ज्योनि भरो हे।

जहाँ जहाँ पर देखो कारा,
वहीं बहाओ करुणा-धारा,

बधन मुक्त करो युग युग के
पाप-ताप अभिशाप हरो हे।

अतरतम में ज्योति भरो हे।

२

अभय करो हे!

युग युग का जड़ प्रमाद,
छिन्न करो विष-विषाद,
नव बल का दो प्रसाद,

निर्बल तन, निर्बल मन, ओज भरो हे!

अभय करो हे!

नयनो में तम अपार,
करुणा की किरण ढार,
खोल प्राण - रुद्ध - द्वार,

नूतन पथ, नूतन रथ, सूत्र धरो हे!

अभय करो हे!

शिर पर हो वरद हस्त,
क्यों फिर हो देश त्रस्त?
नव कृति में सकल व्यस्त,

युग युग के बंधन चिर, अचिर हरो हे!

अभय करो हे!

३

मुक्ति की दात्री! तुम्हीं हो
मुक्ति की ही याचिनी?

अन्नपूर्णे! तुम क्षुधित हो?
फिर न क्यों मानस मथित हो?

देवि! यह दुर्दैव कैसा
आज तुम रजवासिनी?

केश रूखे, धूलि लुंठित,
बनी वीणा-वाणि कुंठित,

राजराजेश्वरि! बनी हो
आज तुम कंगालिनी!

है फटा अंचल लहरता,
बन दरिद्र-ध्वजा फहरता,

रत्न-आभरणे ! बनी तुम
आज पंथ-भिखारिणी !

है कहाँ वह पूर्व महिमा ?
है कहाँ वह दर्प गरिमा ?

आदिशक्ति ! अशक्ति कैसी ?
पद-दलित अभिमानिनी !

अंग पर है गलित कंथा,
चल रही तुम विषम पथा,

ओ शिवे ! यह वेश कैसा ?
अशिव चित्तविदारिणी !

स्तन्य-पय मयि ! अमृत-स्राविनि !
जननि ! उठ ओ जन्मदायिनि !

कोटि कोटि सपूत तेरे
तू नहीं हतभागिनी !

जाग माँ ! ओ जगद्धात्री !
तू दया की बन न पात्री !

ले त्रिशूल सतेज कर में,
ओ त्रिशूल-विनाशिनी !

भारत-माता

चित्रकार: कुमारी अमृत शेरगिल

रत्नआभरणे! बनी तुम?
आज पंथ-भिखारिणी—

पृष्ठ—१९१

४

वंदिनी तव वंदना में
कौन सा मैं गीत गाऊँ ?

स्वर उठे मेरा गगन पर,
बने गुञ्जित ध्वनित मन पर,

कोटि कण्ठो में तुम्हारी
वेदना कैसे बजाऊँ ?

फिर, न कसकें क्रूर कड़ियाँ,
बनें शीतल जलन-घड़ियाँ,

प्राण का चन्दन तुम्हारे
किस चरण तल पर लगाऊँ ?

धूलि लुण्ठित हों न अलकें,
खिलें पा नव ज्योति पलकें,

दुर्दिनो में भाग्य की
मधु चन्द्रिका कैसे खिलाऊँ ?

तुम उठो माँ ! पा नवल बल,
दीप्त हो फिर भाल उज्ज्वल !

इस निविड नीरव निशा में
किस उषा की रश्मि लाऊँ ?

५

डिग न रे मन !

आज आर्त विषण्ण दीना,
मातृ-मुख है कान्ति क्षीणा,
अन्न-धन - सर्वस्व - हीना !

पूत ! आज सपूत बन तू
पोंछ रे माँ के नयन-कण !

डिग न रे मन !

सजल नयन निहारती है,
विकल व्यथित पुकारती है,
बुझ रही अब आरती है,

प्राण का घृत दे अमृत हे !
बने ज्योतित मन्द जीवन !

डिग न रे मन !

कसकती हैं क्रूर कड़ियाँ,
सिसकती हैं प्रहर घड़ियाँ,
तोड़ दे रे लौह-लड़ियाँ,

पुरुष ! तव पुरुषत्व पर
है बज रही जंजीर झनझन !

डिग न रे मन !

६

जननी आज अर्ध क्षत-वसना!
खुलती नहीं तुम्हारी रसना!

यह जीवन ही जीवन है यदि,
तो तुम अब न जियो!

कसा शृंखलाओं में मृदु तन,
आह! दुसह है यह उत्पीडन!

बहुत सह चुके असह व्यथा है
यह व्रण आज सियो!

कोटि कोटि तुम जिसके त्राता!
क्षुधित तृषित अ-वसन वह माता!

अमृत दान दो अमृत-पुत्र हे!
या ले गरल पियो!

७

लौटो आज प्रवासी!

मधुपी बने न भूमो बन में,
मधु घोलो मत जग जीवन में,

आकुल नयन हेरते तुमको
दूर न हो अधिवासी!

लौटो आज प्रवासी!

क्यों तुम भूले अपनेपन को?
क्यों न देखते उर के व्रण को?

क्या प्राणों की वंशी में
बजती है नहीं उदासी?

लौटो आज प्रवासी!

अब किस रस में मुग्धमना हो?
किस आनंद में स्निग्धमना हो?

भस्म हो रहा भवन तुम्हारा
अब मत बनो विलासी!

लौटो आज प्रवासी!

८

सुन सकोगे क्या कभी
मेरी व्यथा की रागिनी ?

जलन की ये विषम घड़ियाँ,
फिर कसेंगी बन न कडियाँ,

कोटि कठो में बजेगी,
यह अमन्द विहागिनी !

नयन में ढल आयेगा जल,
जायगा पाषाण उर गल,

मैं अभागिनि भी बनूँगी
क्या कभी बडभागिनी ?

तुम सभी मिलकर चलोगे,
युगो के बधन दलोगे,

फिर नहीं झनझन बजेगी
लौह की यह नागिनी !

९

यह हठ और न ठानो!

मंदिर क्या है नही तुम्हारे?
मसजिद जिनकी, क्या वे न्यारे?
मठ विहार किसके है सारे?

सभी तुम्हारी गौरव गरिमा
निज को पहिचानो!

फिर लडते हो क्यो आपस में?
कैसा बैर भरा नस नस में?
तुम हो किस दानव के वश में?

यह षड्यन्त्र सिखाया किसने?
तुम उसको जानो!

हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, इसाई,
क्या न सभी है भाई भाई,
जन्मभूमि है सबकी माई!

क्यों न उठाकर कोटि भुजायें
जय - वितान तानो?

१०

आज कवि ! जग !

त्याग अन्तःपुर, निरख

ये जा रहे हैं कौन दृग ठग ?

ध्वज तिरंगा सुदृढ़ कर में

ध्यान किसका आज उर में ?

जा रहे ले गर्व नव,

हैं छा रहे कैसे अरुण पग ?

आज कवि ! जग !

किधर है रण, कौन है प्रण ?

मौन हो ये सह रहे व्रण !

आज विचलित कर न पाता

क्यों इन्हें शोणित भरा मग ?

आज कवि ! जग !

चल रही है कौन आँधी ?

क्या कहा ? जा रहे गाँधी !

जागरण की कनक किरणें

कर रही हैं धरा जगमग !

आज कवि ! जग !

चलो मेरे कवि समर में,

क्या यहाँ सुनसान घर में ?

वहीं तान उठे तुम्हारी

बढ़े नव-बल पा सबल डग !

आज कवि ! जग !

११

नवयुग की शङ्ख-ध्वनि पथ पर।

तुम कैसे बैठे निर्जन में?
ले करके विषाद जीवन में,
क्या न रक्तकण कुछ यौवन में?

चढ़ो प्रलय के रथ पर।

बच न सकोगे इन लपटों से,
महाकाल की इन झपटों से,
अत्याचार छद्म कपटों से,

मुड़ो न भय के अथ पर।

झंझा को झड़ को बढ़ झेलो,
मेघों से बिजली से खेलो,
वज्र गिरे, छाती पर ले लो,

बढ़ो मृत्यु को मथकर।

१२

ओ हठीले जाग !

आज पलको से निराली
अलस निद्रा त्याग !

अब नही वे दिन सुनहले,
औ' रजत की रात,
अब न मधुऋतु, बह रही
पतझड भरी सी बात;
आज धूसर ध्वस में
बजता असीम विहाग !
ओ हठीले जाग !

बुझ गये है विभव के
वे भव्य भवन प्रदीप,
जल रहे है आज गृह में
व्यथा के शत दीप !
धुल गया है भाल से
वह पूर्व अरुण सुहाग !
ओ हठीले जाग !

आज प्राची में खिली
किरणें मदिर रमणीय,
ला रही सदेश नव,
बेला बनी कमनीय,
आज नव निर्माण का
छिडने लगा है राग !
ओ हठीले जाग !

१३

ओ तपस्वी !
ओ तपस्वी !

आज इस रण की घडी में
यह सुभग श्रृंगार कैसा ?
इस प्रलय के काल में
यह प्रणय का अभिसार कैसा ?

ओ मनस्वी !
ओ तपस्वी !

जाग ! आँखें खोल, है
गत रात, अरुणिम प्रात आया,
बढ रहा है देश आज,
अशेष लेकर प्राण काया !

ओ निजस्वी !
ओ तपस्वी !

आज चल उस ओर—है
जिस ओर बलि चढ़ती जवानी,
रहे युग के भाल पर
तेरी अरुण जलती निशानी !

ओ यशस्वी !
ओ तपस्वी !

१४

आज मै किस ओर जाऊँ?

इधर है रण का निमत्रण,
उधर कर में प्रेम ककण,
भ्रमित, चकित, जडित बना मन,
मै किधर निज पग बढाऊँ?

मृत्यु आलिङ्गन इधर है,
अधर का चुम्बन उधर है,
मधु भरे दोनो चषक है,
किन्हे प्राणो से लगाऊँ?

त्याग दूँ क्या यह प्रलय पथ,
चलूँ चढ लूँ बढ प्रणय रथ,
इति बने यह द्वन्द्व का अथ,
मिलन में मगल मनाऊँ?

किन्तु, उधर पुकार आती,
विकल रव चीत्कार आती,
क्वणित बनती व्रणित छाती,
तब किसे कैसे भुलाऊँ?

प्राण! दो तुम भाल चंदन,
विदा दो, हो मातृ-वदन,
शक्ति दो तुम भक्ति जागे,
मुक्ति-पथ पर शिर चढ़ाऊँ!
आज रण की ओर जाऊँ!

१५

आज युद्ध की बेला!

बुझे मशाल, न तेल डाल लो,
अस्त्र-शस्त्र अपने सँभाल लो,

हैं तोपें हुंकार भर रही,
बापू बढ़ा अकेला!

आज युद्ध की बेला!

कोटि कोटि मेरे सेनानी!
देखें तुममें कितना पानी?

अंतिम विजय हार अपनी है,
है यह अन्तिम खेला!

आज युद्ध की बेला!

१६

जब विषम स्वर बज रहे हो
तब न निज स्वर मन्द कर हे!

बढ रहे हो चरण सम में,
वे न जा पहुँचे विषम में,

इन विवादी स्वरो की सब
मूर्च्छनायें बन्द कर हे!

छेड अपनी रागिनी तू,
चित्त-प्राणोन्मादिनी तू,

दग्ध जीवन के क्षणो को
स्निग्ध नव मकरन्द कर हे!

सुने कोई नही तव रव,
चुप न रह, गा गीत नवनव,

रुक गई गति जिन उरो की
आज उनमें स्पद भर हे!

बढ उधर हो जिधर आँधी,
चढ उधर हो जिधर गाँधी,

वदिनी के मुक्ति-पथ की
यातना आनन्दकर हे!

१७

तुम जाओ, तुम्हे बधाई है।

मेरी जननी के सेनानी।
मेरे भारत के अभिमानी!

पहनो हथकड़ियाँ रण-कंकण
माँ देती तुम्हे विदाई है।
तुम जाओ तुम्हे बधाई है!

ओ सेनापति! नरनाहर हे!
माता के लाल जवाहर हे।

तुमको जाते यों देख
आज उन्मत्त बनी तरुणाई है!
तुम जाओ तुम्हे बधाई है।

आँखो के आँसू आज रुको,
तुम अडिग रहो नीचे न झुको,

मङ्गल बेला में बनो फूल
जा रहा युद्ध में भाई है।
तुम जाओ, तुम्हे बधाई है!

तुम कहीं कभी भी झुके नहीं,
तुम कहीं आज तक रुके नही,

वह तरल तिरगा लहराता,
धरती ऊपर उठ आई है!
तुम जाओ तुम्हे बधाई है!

कब तक होगा यह देश मूक ?
होगी अब कडियाँ टूक टूक,

यह हूक अचूक चुनौती बन
घर घर न्यौता दे आई है!
तुम जाओ तुम्हे बधाई है!

हम पीछे, तुम आगे आगे,
सरदार! चलो, जीवन जागे,

बापू के कुछ मस्तानो ने
सत्ता की नीव हिलाई है!
तुम जाओ, तुम्हे बधाई है!

माली आवत देखिकै, कलियन करी पुकार।
फूली फूली चुन लई, कालि हमारी बार॥

कल है मेरी बार प्रवासी!

आज करो मत यह आयोजन,
पुष्पहार, अर्चन, अभिनन्दन,

करो कामना झेलूं सुख से,
जो हो कठिन प्रहार प्रवासी!

गये सभी अपने दीवाने,
वे आजादी के परवाने,

कैसे रुक सकता मैं बोलो?
आती तीक्ष्ण पुकार प्रवासी!

मिलना हो तो तुम भी आना,
बिछुडो को मिल कंठ लगाना,

खूब बनेगी मिल बैठेंगे
जब दीवाने चार प्रवासी!

होगा सारा राग अधूरा,
नहीं करोगे यदि तुम पूरा,

एक साथ बजने ही होंगे
इन प्राणो के तार प्रवासी!

१९

आज तुम किस ओर ?

उधर धन-बल पर सकल
अन्याय बनते न्याय,
इधर दुर्बल पददलित
अगणित विकल असहाय,
उधर युग-शासक, इधर
युग-युग दलित जनरोर !

आज तुम किस ओर ?

उधर दल-बल, सबल तोपें
भर रही हुकार,
इधर अर्पित प्राण की
पडती न सुन झकार,
इधर सब निःशस्त्र,
शस्त्रों का उधर रव घोर !

आज तुम किस ओर ?

उधर अत्याचार की है
रक्तमय तलवार,
इधर जननी के चरण में
जन्म शत बलिहार;
आज बल की ओर तुम,
या, आज बलि की ओर ?

आज तुम किस ओर ?

२०

चलो चलो हे !

शंख बजा, हव्य जला,
आहुति का चक्र चला,

मन्द हो न
अग्निहोत्र,

प्राण ढलो हे !
चलो चलो हे !

मन्दिर में साम-गान,
आत्माहुति बलिप्रदान,

बनो अरुण
यज्ञ-शिखा,

जलो जलो हे !
चलो चलो हे !

दम्भी हो आज ध्वस्त,
दु:ख दैन्य अस्त त्रस्त;

मुक्ति-ऋचा
गाओ तुम,

तिमिर दलो हे !
चलो चलो हे !

आहुति की बेला !

ठो गृह में नहीं प्रवासी !
छोडो मन की सभी उदासी,

कातर पुकार पर
करो नहीं अवहेला !
आई फिर आहुति की बेला !

कुछ समिधायें शेष रही हैं,
तरुण अरुण क्या ज्वाल बही है,

न बदी जीवन अब
कब तक जाये झेला ?
आई फिर आहुति की बेला !

तुम भी अपनी हूति चढ़ाओ,
पूर्णाहुति दे यज्ञ बढाओ,

दे दो दान हठीले !
ाज मुक्ति का मेला !
आई फिर आहुति की बेला !

२२

भाई महादेव देसाई।

बापू को तज करके पथ में,
चढकर अमरमृत्यु के रथ में,

मिला निमंत्रण, कहाँ चल पडे?
कुछ न विलम्ब लगाई।

अब बापू का हाथ बटाकर,
राष्ट्र-कार्य का भार घटा कर,

कौन आयु देगा बापू को
किसने वह गति पाई?

कौन राष्ट्र-इतिहास लिखेगा?
पावन राष्ट्र विकास लिखेगा,

वह लेखनी ले गये तुम तो
जो थी लिखने आई।

चले रिक्त कर गोद देश की।
क्या भूलोगे सुधि स्वदेश की?

स्वतंत्रता की ज्वाला बन कर
उर उर धधको भाई।

भाई महादेव देसाई।

२३

जीवन हो वरदान।

प्रतिपल सुन्दर हो, सुखकर हो,
ज्ञान मुखर हो, कर्म मुखर हो,

रहे आत्मसम्मान।

अविचल प्रण हो, अविरल रण हो,
यश बनता निज तन का व्रण हो,

प्रिय हो निज बलिदान।

बडी साध हो, गति अबाध हो,
अपनी पूर्णाहुति अगाध हो,

फल का रहे न ध्यान।

२४

आज सोये प्राण जागे!
देश के अरमान जागे!

सज चली अक्षौहिणी है,
बज चली रणकिंकिणी है,

कोटि कोटि चरण-धरण से
युगों के प्रस्थान जागे!

हटा अवगुंठन मुखों का,
मोह सम्मोहन सुखों का,

बढ़ीं कन्यायें, बहन माँ,
मधुर मङ्गल गान जागे!

है हिमाचल आज उन्नत,
देख निज गौरव समुन्नत,

आज जन में, जनपदों में,
उरों में उत्थान जागे!

नील सिंधु गरज रहा है,
बार बार बरज रहा है,

सावधान! दिगन्त दिग्गज!
देश के अभिमान जागे!

हथकड़ी हैं खनखनातीं,
बेड़ियाँ हैं झनझनातीं,

आज बन्दी के स्वरों में
क्रान्ति के आह्वान जागे!

आज सोये प्राण जागे!

२५

स्वागत! आज प्रवासी!

आये आज छिन्न कर कड़ियाँ,
युग युग की लोहे की लड़ियाँ,

गृह गृह मङ्गल दीप जल रहे
मन की मिटी उदासी!

आये कारागृह में तपकर,
मुक्ति मन्त्र निशिवासर जपकर,

पावन करो आज आँगन को
ओ माँ के सन्यासी!

पाकर तुमसे ही नरनाहर,
गिरे राष्ट्र उठते फिर ऊपर,

तरल तिरंगा लहराता फिर,
देख तुम्हें गृहवासी।

तव चरणों की धूलि, तीर्थ कण,
बिखरा दो ये सिकता पावन,

हम मृतकों में जागे जीवन
ओ बलि के अभ्यासी!

स्वागत! आज प्रवासी!

२६

इस निविड नीरव निशा में
कब सुवर्ण प्रभात होगा ?

सकुचित सरसिज खिलेंगे,
सुरभि मधु गृह गृह मिलेंगे,

बह रहा अमृत लिये
मन का अमद प्रपात होगा !

इस निविड नीरव निशा में
कब सुवर्ण प्रभात होगा ?

करेंगे खग विहग कलरव
सजेंगे नव नवल उत्सव,

मुक्त मुक्त समीर में
खिलता सुनहला गात होगा !

इस निविड नीरव निशा में
कब सुवर्ण प्रभात होगा ?

झुकेंगी फल - भरी शाखें,
झुकेंगी मद - भरी आँखें,

यह प्रलय का दिन, प्रणय
की गोद में प्रणिपात होगा !

इस निविड नीरव निशा में
कब सुवर्ण प्रभात होगा ?

विभव की दूर्वा नवेली,
बनेगी अपनी सहेली,

आज के मरु में सुखद
नदन सदन नवजात होगा !

इस निविड नीरव निशा में
कब सुवर्ण प्रभात होगा ?

वेदना के व्यथित तारे,
डूब कर जलनिधि किनारे,

फिर न आयेंगे कभी,
यह चिर तिमिर अज्ञात होगा !

इस निविड नीरव निशा में
कब सुवर्ण प्रभात होगा ?

नव किरण की मदिर लाली,
भरेगी मधु रिक्त प्याली,

एक ही स्वर कोटि कंठो में
ध्वनित अवदात होगा !

इस निविड नीरव निशा में
कब सुवर्ण प्रभात होगा ?

विषम पथ ये सम बनेंगे,
सुखद जीवन क्रम बनेंगे,

जन्म नव, जीवन नवल,
नवदेश, नवयुग ज्ञात होगा !

इस निविड नीरव निशा में,
कब सुवर्ण प्रभात होगा ?

२७

कब होगा गृह गृह में मगल ?

टूटेगी आँगन की कारा,
मुक्त बनेगा जनगण सारा,

जय जननी के महाघोष से
गूँजेगा अबर अवनीतल !

नव उत्साह भरित मन होगे
नव निर्माण निरत जन होगे,

नव चेतन के महाप्राण से
होगा दृग प्राणो में नव बल !

ले करके शत शत आयोजन,
होगा मातृभूमि का पूजन,

महा आरती में गूँजेगा,
कोटि कोटि कठो का कलकल !

एक जातिमत, एक लोकमत,
उन्नत होगा, सब विरोध नत;

फिर जय के अभियान उठेंगे
पाकर मानव का तप निर्मल !

कब होगा जीवन में मगल ?

२८

क्या अब तुम फिर आ न सकोगे ?

जब जगती थी शोणित मग्ना,
चेतनता थी तिमिर निमग्ना,
गति मति प्रगति बनी थी भग्ना,

तब तो तुम आये थे उत्सुक
क्या अब चरण बढ़ा न सकोगे ?

हिंसा नृत्य कर रही गृह गृह,
मृत्यु ग्रसित करती है रह रह,
रक्तधार उठती है बह बह,

फिर आकुल आँखो में अब तुम
क्या दो आँसू ला न सकोगे ?

फिर अशोक चढते कलिंग पर
शोणित से हो रहे खड्ग तर,
नर-सहार मचा है बर्बर,

बनकर दारुण दाह हृदय मे
क्या परिवर्तन ला न सकोगे ?

है मानव में रही न ममता,
स्वप्न बनी प्राणों की समता,
फिर किसमें हो करुणा क्षमता ?

भरा विषमता से भव व्याकुल
क्या सम-क्रम लौटा न सकोगे ?

लौटा दो वह युग मङ्गलमय,
पशु-पक्षी सब जिसमें निर्भय,
जहाँ अहिंसा का अरुणोदय,

आत्म-मिलन के सघन कुञ्ज हो,
क्या वह मधुऋतु छा न सकोगे ?

आओ, एक बार फिर, आओ,
लाओ, वह मङ्गल दिन, लाओ,
गाओ, वही गीत फिर, गाओ,

आज कहो मत—वह करुणा का
महागान फिर गा न सकोगे ?

क्या अब तुम फिर आ न सकोगे ?

२९

भव की व्यथा हरो!

भय छाया है देश देश में,
अस्त्र शस्त्र के छद्म वेश में,
खोलो बंद हृदय के लोचन

निर्मल दृष्टि करो!
भव की व्यथा हरो!

मानव आज बन रहे दानव,
भव में बसा रहे हैं रौरव,
विकसित करो संकुचित शतदल

मधुर मरंद भरो!
भव की व्यथा हरो!

राष्ट्र राष्ट्र में है संघर्षण,
करते सब शोणित का तर्पण,
व्यथित विश्व के मस्तक पर निज

करुणापाणि धरो!
भव की व्यथा हरो!

३०

है अमर गायन तुम्हारे
और तुम हो चिर अमर कवि !

पा तुम्हारी पुण्य प्रतिमा !
जगी अपनी लुप्त गरिमा,

विश्व रजनी में उगे रवि !
गये नव आलोक भर कवि !

पा तुम्हारी ज्योति महिमा,
खिली प्राची में अरुणिमा,

पा तुम्हे हम पा गये
पावन पुरातन ऋषि प्रवर कवि !

एकबार विदेश के फिर,
मातृपद पर हुए नत शिर,

कोटि कठो में तुम्हारी
उठी गीताञ्जलि लहर कवि !

कौन वह जनपद अभागा ?
जो तुम्हे पाकर न जागा।

बधनो की शृखला में
बज रहे बन मुक्ति-स्वर कवि !

३१
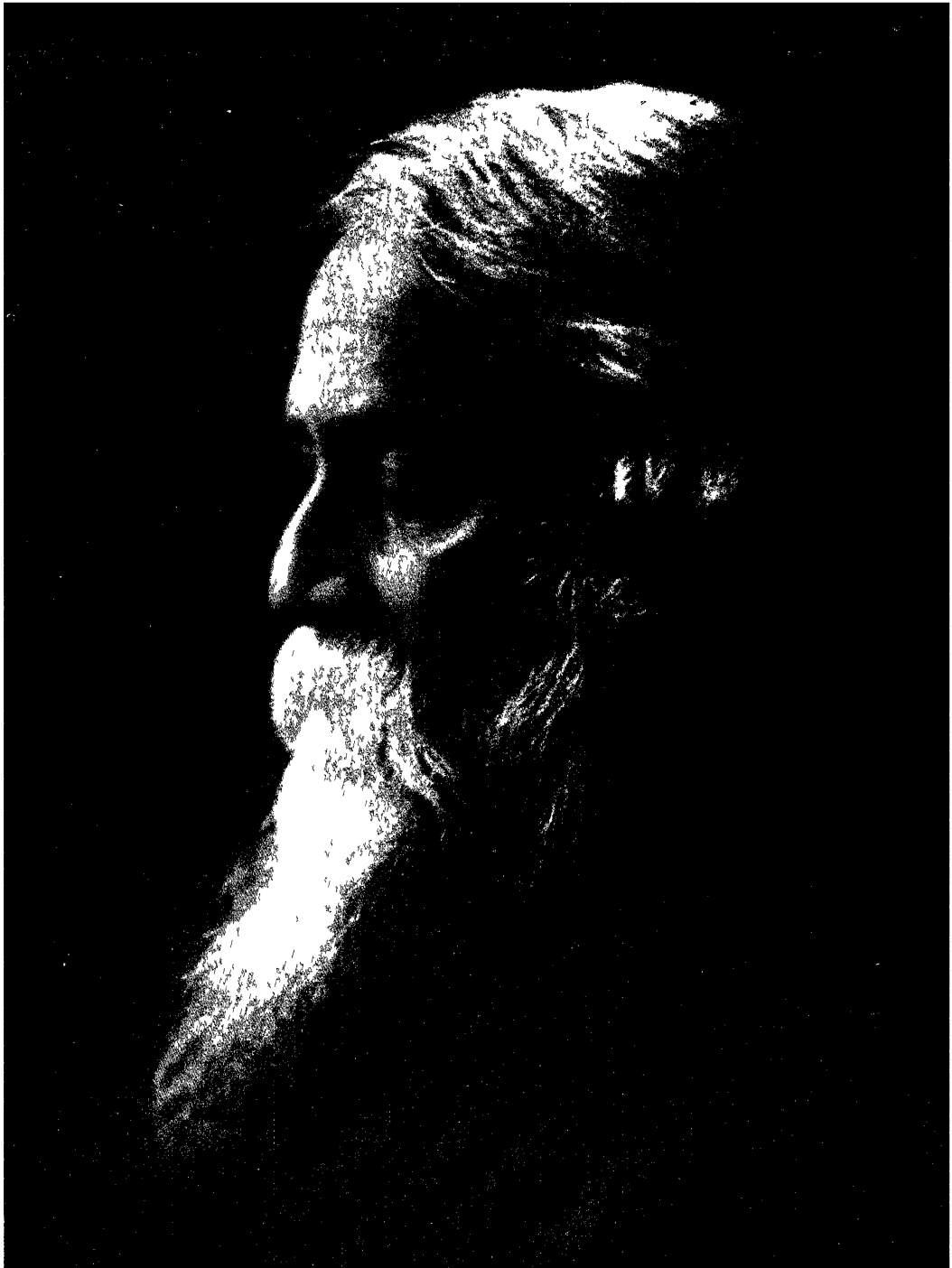
जग-जीवन की दोपहरी में
शीतल छाँह बनो मेरे कवि!

श्रान्त पथिक पावे कुछ रस कण,
सूख चलें मस्तक के श्रम कण,

निरालम्ब के नव अवलम्बन,
करुणा बाँह बनो मेरे कवि!

पीड़ित प्राणों में बन गायन,
करो नींद मधु सुख का वर्षण,

वसुधा के जलते कण कण में,
अमृत-प्रवाह बनो मेरे कवि!

उनको भी सद्बुद्धि राम दो।

भूले हैं जो नाम तुम्हारा,
भूले हैं जो धाम तुम्हारा,
उनको भी श्रद्धा अकाम दो।

भटक रहे मिथ्या माया में,
आत्म भूल, उलझे काया में,
उनको भी गतिमति प्रकाम दो।

व्यथित ग्रथित सुख, दुख से कातर,
हरो आज उन पर करुणाकर!
उनको भी दुख में विराम दो।

जय जय जाग्रत हे!
जय जय भारत हे!

रण-प्रण-बद्ध-विपुल सेना-दल,
उठे युगो के ज्यो गौरव-बल,
आज मुखर आँगन में हलचल,
जय प्रस्थान-निरत, जय ध्वनिमय,
गति मति संयत हे!

जय जय जाग्रत हे!
जय जय भारत हे!

विस्मृत जातिभेद, भय-उद्भव,
विकसित - राष्ट्रप्रेम, नववैभव,
गलित पुरातन रूढि, राज्य-रव,
जनगण - सागर - ऊद्धर्व - उच्छ्वसित
विस्तृत उन्नत हे!

जय जय भारत हे!
जय जय जाग्रत हे!

उदित भाग्य, दुर्भाग्य तिरोहित,
दृग मन नव आलोक निमज्जित,
सबल सगठन आज मुक्तिहित,
नवनिर्माण - निरत प्रतिपद, नव
बलिपथ उद्यत हे!

जय जय जाग्रत हे!
जय जय भारत हे!
जय जय तपरत हे!

३५

जय राष्ट्रीय निशान !
जय राष्ट्रीय निशान !
जय राष्ट्रीय निशान !!

लहर लहर तू मलय पवन में,
फहर फहर तू नील गगन में,
छहर छहर जग के आँगन में,

सबसे उच्च महान !
सबसे उच्च महान !
जय राष्ट्रीय निशान !!

जब तक एक रक्त कण तन में,
डिगें न तिल भर अपने प्रण में,
हाहाकार मचावें रण में,

जननी की संतान !
जननी की संतान !
जय राष्ट्रीय निशान !!

मस्तक पर शोभित हो रोली,
बढ़े शूरवीरों की टोली,
खेलें आज मरण की होली,

बूढ़े और जवान !
बूढे और जवान !
जय राष्ट्रीय निशान !!

मन में दीन-दुखी की ममता,
हममें हो मरने की क्षमता,
मानव मानव में हो समता,

धनी गरीब समान
गूँजे नभ में तान
जय राष्ट्रीय निशान !!

तेरा मेरुदण्ड हो कर में,
स्वतन्त्रता के महासमर में,
वज्र शक्ति बन व्यापे उर में,

दे दें जीवन-प्राण !
दे दें जीवन-प्राण !
जय राष्ट्रीय निशान !!

३६

न हाथ एक शस्त्र हो,
न साथ एक अस्त्र हो,
न अन्न, नीर वस्त्र हो,

हटो नहीं,
डटो वहीं,
बढ़े चलो
बढे चलो ।

रहे समक्ष हिमशिखर
तुम्हारा प्रण उठे निखर,
भले ही जाये तन बिखर,

रुको नहीं,
झुको नहीं,
बढ़े चलो
बढे चलो ।

घटा घिरी अटूट हो
अधर में कालकूट हो,
वही अमृत का घूँट हो,

जिये चलो
मरे चलो
बढ़े चलो
बढे चलो !

गगन उगलता आग हो
छिडा मरण का राग हो,
लहू का अपने फाग हो

अड़ो वहीं
गडो वहीं
बढ़े चलो !
बढ़े चलो !

उभर रहा ख़याल हो
चलो नई मिसाल हो,
जलो नई मशाल हो,

रुको नहीं
झुको नहीं
बढे चलो
बढ़े चलो !

अशेष रक्त तोल दो,
स्वतन्त्रता का मोल दो,
कडी युगो की खोल दो

डरो नही
मरो वहीं
बढे चलो !
बढ़े चलो !

३७

(प्रयाण-गीत)

फूंको शख, ध्वजाये फहरें
चले कोटि सेना, घन घहरें।
मचे प्रलय !
बढो अभय !
जय जय जय !

जननी के योधा सेनानी,
अमर तुम्हारी है कुर्बानी,
हे प्रणमय !
हे व्रणमय !
बढ़ो अभय !

नित पददलित प्रजा के क्रदन
अब न सहे जाते है बधन ।
करुणामय !
बढो अभय !
जय जय जय !

बलि पर बलि ले चलो निरतर,
हो भारत में आज युगातर,
हे बलमय !
हे बलिमय !
बढो अभय !

तोपें फटें, फटे भू अबर
धरणी धँसे, धँसे धरणीधर,
मृत्युजय !
बढो अभय !
जय जय जय !

अमर सत्य के आगे थरथर,
कँपे विश्व, काँपे विश्वंभर,
हे दुर्जय !
बढो अभय !
जय जय जय !

बढो प्रभंजन आँधी बनकर,
चढो दुर्ग पर गाँधी बनकर,
वीर हृदय !
धीर हृदय !
जय जय जय !

राजतंत्र के इस खंडहर पर,
प्रजातंत्र के उठें नव शिखर,

जनगण जय !
जनमत जय !
बढ़ो अभय !

जगें मातृ-मंदिर के ऊपर,
स्वतन्त्रता के दीपक सुन्दर,

मंगलमय !
बढ़ो अभय !
जय जय जय !